द्वितीय अध्याय

'भारत दुर्दशा' और 'अंधेरनगरी नाटकों का कथ्य

द्वितीय अध्याय

'भारत दुर्दशा' और 'अंधेरनगरी नाटकों' का कथ्य

2.1. कथावस्तु :

कथ्य का स्वरूप :

'कथ्य' से तात्पर्य - साहित्य के दो पक्ष कथ्य और शैली प्रमुख होते हैं। पद्य के संदर्भ में इन्हें भाव और शैली के नाम से अभिहित किया जाता है। गद्य साहित्य के संदर्भ में भाव की अपेक्षा 'कथ्य' कहना अधिक सार्थक लगता है क्योंकि भावात्मकता पद्य का आत्म-तत्व होता हैं तो वैचारिकता गद्य का।

भारतीय काव्यशास्त्र में तथा पाश्चात्य साहित्यशास्त्र में भी नाटक को 'कथाकाव्य' अर्थात् 'कथासाहित्य' के रूप में स्वीकार किया गया है। कथा अर्थात् 'कथ्य' नाटक के निर्माण का प्रमुख आधार है। जिस प्रकार मनुष्य के शरीर में प्राण का महत्व है, उसी प्रकार नाटक में कथ्य का महत्व है। इससे स्पष्ट होता है कि, कथ्य के अभाव में नाटक का निर्माण नही हो सकता।

कथ्य की विशेषताएँ -

(1) जब हिन्दी के विभिन्न नाटक प्रकारों के कथाओं को देखते हैं तो, वह दो प्रकार की दिखायी देती है 1) अधिकारिक कथा और 2) प्रासंगिक कथा। विषय की दृष्टि से कथा में प्रख्यात और मिश्र यह भेद आज भी स्वीकार है।

(2) हिन्दी नाटकों की कथाएँ या तो इतिहास प्रसिद्ध होती है या काल्पनिक या मिश्र किन्तु काल्पनिक कथाओं का आधार जीवन यथार्थ हो होता है।

(3) नाटक की कथाएँ जीवन के विविध क्षेत्रों से ग्रहण की जाती है
- 1) ऐतिहासिक 2) पौराणिक 3) दर्शन 4) अध्यात्म 5) सामाजिक 6) राजनैतिक।

(4) सामाजिक विषयवस्तु में राजनैतिक, समस्यामूलक आदि विषय समाहित हो जाते है, क्योंकि सब विषयों का सम्बन्ध किसी न किसी रूप में समाज से हो होता है।

इस दृष्टि से देखा जाए तो भारतेन्दु जी के विवेचित नाटक 'भारत दुर्दशा' व 'अंधेरनगरी' का कथ्य राजनैतिक समस्या पर आधारित है। समाज तथा राष्ट्र की आत्मा स्वस्थ राजनीति से प्राणवान बनती है, अगर वह विदेशी शासन के हाथ में चली जाती है तो पारतंत्र्य से निर्बल हो जाती है, यही इन नाटकों का मुख्य 'कथ्य' है।

2.1.1 'भारत-दुर्दशा' नाटक का कथ्य :

प्रस्तावना :

'भारत दुर्दशा' नाटक का रचनाकाल सन् **1872** ई. है। यह हिन्दी का सर्वप्रथम राजनीतिक दुखान्त नाटक है। यह प्रतीकात्मक शैली पर रचा गया है। भारतेन्दु ने अपने इस नाटक में राष्ट्रीय दुर्दशा एवं अध:पतन के कारणों का परिक्षण करते हुए तत्कालीन राष्ट्रीयता की अवनति का वास्तविक एवं शोचनीय स्थितियों का वर्णन किया है। भारतेन्दु ने अपने इस नाटक में राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक दुर्दशा, दुर्गति तथा समाज में स्थित दयनीय अवस्था का अत्यन्त मार्मिक चित्र खींचा है। इसके साथ ही वह प्राचीन गौरव का स्मरण भी किया है।प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु छ: अंको में विभाजित है।

प्रथम अंक में एक योगी आकर भारत के कष्टों को सोच-सोचकर रोता है, वहाँ भारतियों को तथा दर्शकों कों प्रेरित करते हुए कहता है कि, भारत की इस दुरावस्था पर सब मिलकर आँसू बहाओ।

"रोअहु सब मिलि के आवहु भारत भाई।
हा, हा। भारत दुर्दशा न देखी जाई ।।"[1]

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - **133**

यह स्थिति पाठकों एवं दर्शकों के मन पर आघात करती है और अन्त तक प्रतिध्वनित रहती है। 'भारत दुर्दशा' शीर्षक से ही स्पष्ट होता है कि, इसमें भारत की दुर्दशा का चित्रण है। इस अंक में अंग्रेजी राज्य में भारत का धन विदेश चले जाना, महँगाई, बीमारियाँ, टैक्स आदि समस्याओं को देखता है, लेकिन उनसे बचने का रास्ता उसे दिखाई नही देता हैं। इन परिस्थितियों में हीन-दीन लोगों की अवस्था का बड़ा ही जीवंत चित्रण किया गया हैं।

द्वितीय अंक की दृश्य योजना सांकेतिक है। यह अंक श्मशान में अभिनीत है। श्मशान निराशा, दु:ख और शोक का प्रतीक हुआ करता है, नाटककार का कथन है कि, श्मशान टूटे-फूटे मंदिर, कौआ, कुत्ता, सियारों का घूमना, अस्थि का इधर-उधर पड़ना, यहाँ सब रंग संकेत दु:ख एवं निराशा को प्रकट करते है। भारत फटे कपडे पहना हुआ है, सिर पर पूरा मुकुट नहीं है, आधा है हाथ में छडी लेकर कुबड़ा हो चलता है और उसके अंग शिथिल है।

भारतेन्दु ने दुर्योधन की उक्ति को सर्वप्रथम उद्धृत किया है। जो भारत 'शुच्यग्रैनैव दास्यामि विना युद्धेन केशव'[1] वही भारत श्मशान तुल्य है। यहाँ की योग्यता, विद्या, सभ्यता, उदयोग, उदारता, धन, बल, मन, दृढ मनोबल, सत्य सभी का लोप हुआ था। निराशा के गर्त में भारत डूबा है। आशा की हल्की किरण भी निर्लज्जता को मान्य नहीं।

इस अंक में भारत की जो दुर्दशा हुई है उसका चित्रण बड़ा ही मार्मिक हृदयस्पर्शी चित्रण हुआ है।भारत ईश्वर की आराधना करते हुए उसे पुकारता है परंतु अंत में निराश होकर मूर्च्छित होता है।सर्वत्र निराशा का वातावरण ही दिखाई देता है।

तीसरे अंक में 'भारत दुर्दैव' का प्रवेश होते ही भारत की रही -सही आशा पर भी पानी फिर जाता है।भय दिखाकर वह भारत को कँपकँपा देता है।अंग्रेजों

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - **135**

के पक्ष में बोलने वालों को मैडल और खिताब मिलते है। उनके खिलाफ आवाज उठाने वालों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। 'भारत दुर्दैव' चंद पढ़े-लिखे लोगों की हँसी उड़ाता है। ऐसे व्यक्तियों की उसकी नजर में कोई कीमत नहीं है। वह कहता है कि, "हा, हाहा! कुछ पढ़े लिखे मिलकर देश सुधारा चाहते है! हा, हाहा! एक चने से भाड़ फोडेंगे।"[1]

प्रतिनायक भारत दुर्दैव 'भारत' को घेरने के लिए व्यूह रचना करता है। वह कहता है, भारत मूर्ख है उसे अब भी परमेश्वर और राजराजेश्वरी पर भरोसा है। हम इसकी सभी प्रकार से दुर्दशा, करेंगे। इसे हम कौड़ी - कौड़ी के लिए मुहताज करेंगे। वह यह भी कहता है कि, वह सभी ओर आलस और निराशा फैलाएगा। भारत दुर्दैव के इन मनसूबों को पूर्णता देने के लिए सत्यानाश फौजदार सहयोग देता हैं। वह जाति, धर्म, विधवा - विवाह निषेध आदि के नाम पर लोगों में मतभेद निर्माण कर उनमें फूट, लोभ, भय, उपेक्षा, स्वार्थ परकता, पक्षपात, हठ, शोक, निराशा और निर्बलता आदि का वातावरण तैयार करके भाषा, धर्म, रहन-सहन, खान-पान आदि कें सहारे उनको एक-दूसरे से अलग करने का कुकर्म करता है।

अंक चार में भारत दुर्दैव के हुक्म पर उसके सहयोगी रोग, अंधकार, आलस और मदिरा हाजिर हो जाते हैं। फिर उन सबको तरह -तरह से भारत का दम तोड़ने की आज्ञा देता है।

'रोग' कहता है कि, त्रिलोक में ऐसा कोई नहीं जिस पर मेरा प्रभुत्व नहीं है। नजर, भूत, प्रेत, टोना, सब मेरे ही नाम है। भारत दुर्दैव उसे आज्ञा देता है कि, भारत को चारों ओर से घेर लों। उसकी आज्ञा पर रोग, हैजा, डेंगू, अपाप्लेक्सी फैलाने का मनसूबा करता है, देवी -देवता पर विश्वास करके बच्चों को टीका नहीं लगवाएँगे और अपने ही हाथों अपने बच्चों को मारेंगे।

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 138

'आलस' ने इस अंक में अपने व्यक्तित्व के गुण बताकर, भारत की जनता में जो आलस की भावना है उसे व्यंग्यपूर्ण ढंग से कुछ उदाहारणों द्वारा स्पष्ट किया है। एक पोस्ती ने कहा; पी पोस्त नौ दिन चले अढ़ाई कोस। दूसरे ने जवाब दिया, अबे वह पोस्त न होगा डाक का हरकारा होगा। एक बार हमारे दो चेले लेटे थे और उसी राह से एक सवार जा रहा था। पहले ने पुकारा भाई सवार, सवार यह पक्का आम टपक कर मेरी छाती पर पड़ा है, जरा मेरो मुँह में तो डाल। सवार ने कहा - "अजी तुम बड़े आलसी हो। तुम्हारी छाती पर आम पडा है सिर्फ हाथ से उठा कर मुँह में डालने में यह आलस है। दूसरा बोला ठीक है साहब, यह बड़ा ही आलसी है, रात भर कुत्ता मेरा मुँह चाटा किया और यह पास ही पड़ा था पर इसने न हाँका। सच है किस किस जिंदगी के वास्ते तकलीफ उठाना मजे मे हालमस्त पडे रहना। सुख केवल हम में है, 'आलसी पड़े कुएँ में वही चैन है।"[1]

तात्पर्य भारतेन्दु जी ने 'आलस' पात्र के माध्यम से तत्कालीन भारतीय जनता में उसी के कारण जो अकार्यक्षम कार्यप्रणाली निर्माण हुई थी उसे दूर करने का प्रयत्न किया है। लोगों में आत्मविश्वास, स्वावलंबन और स्वाभिमान की भावना को जगाया और समाज को विकास कार्यो में जुड़ने और देशोन्नति के मार्ग पर चलकर प्रगति करने की प्रेरणा दी है। निराशा, आत्मकुण्ठा, पीड़ा का वातावरण बदलकर उन्होंने लोगों में नई चेतना का निर्माण कर बड़े ही व्यंग्यपूर्ण ढंग से प्रभावी वातावरण तैयार करने का प्रयास किया हैं।

मदिरा ने अपना परिचय देते हुए कहा कि, "मैं सोम की कन्या हूँ।"[2] संसार के समस्त जाति - धर्म के लोगों के लिए वह कितनी प्रिय है यह भी स्पष्ट करती है कि, संसार में चार मत बहुत प्रबल है हिंदू, बौद्ध, मुसलमान और क्रिस्तान। इन चारों में उसकी पवित्र प्रेममूर्ति विराजमान है। उसका कहना है कि, चाहे कोई भी व्यसन हो

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - **143**
1. वही पृष्ठ - **145**

उसकी लत अगर लग जाए तो मनुष्य उसके अधीन हो जाता है। मदिरा के माध्यम से भारतेन्दु ने स्पष्ट किया है कि, हिंदुस्तान की जनता में अंग्रेजों ने 'मदिरा' पेय का व्यापार शुरू करके लोगों को व्यसनाधीन बनाया और उनकी कार्यक्षमता को निर्बल किया है।

इस अंक के अंत में अंधकार का प्रवेश होता है वह कहता है कि, हमारा सृष्टि संहार कारक भगवान् तमोगुणजी से जन्म है। चोर, उलूक और लंपटों के हम एकमात्र जीवन है। पर्वतों की गुहा, शौकितों के नेत्र, मूर्खों के मस्तिष्क और खलों के चित्त में हमारा निवास है। अपने स्वरूप के दो रूप वह बताता है, एक अध्यात्मिक और एक अधिभौतिक जो लोक में अज्ञान और अँधेरे के नाम से प्रसिद्ध है। भारत दुर्दैव की आज्ञा पर हाजिर हो जाने पर वह अंधकार से कहता है कि, "मैंने अपने बहुत से साथी भारतविजय को भेजे है, पर तुम्हारे बिना सब निर्बल है। मुझको तुम्हारा बड़ा भरोसा है अब तुमको भी वहाँ जाना होगा।"[1]

'भारत दुर्दैव' हिंदुस्तान में अज्ञानरूपी अंधकार फैलाकर लोंगों को गुमराह करता है और लोगों के 'वर्तमान' और 'भविष्य' दोनों को अँधेरे में डाल देता है। अंधकार कहता है कि, जो महाराज अर्थात् 'भारत दुर्दैव' के खिलाफ है अब उन्हें शरण नहीं मिलेगी। बुद्धि, विद्या, धन-धान सब नाश होगा। अब राम, धर्म, अर्जुन नहीं रहे और शाक्यसिंह व्यास भी नहीं। सभी हिन्दुस्तानी स्वार्थी और मूर्ख हैं। इनमें चंचलता है जो उनके विकास में बाधा बनी हुई है। एकता के बिना सब बुद्धि हीन और बलहीन बन गए हैं ।

पाँचवें अंक में भारत के पक्ष में सप्त ऋषियों के समान सात मनुष्य भारत के उद्धार पर विचार करते हैं। इसमें हमारे समाज के कर्णधार, सुधारक, कवि, सभापति, एड़िटर इनके दयनीय मौखिक उत्साह का अच्छा चित्रण किया गया हैं। सभा में बैठकर ये लोग कैसी लम्बी चौड़ी बातचीत करते है, व्याख्यान में उत्साह दिखाते है

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 148

परन्तु यदि किसी प्रकार का संकट और भय का सामना हो तो, 'बाज झपट जनु लव लुकाने"[1] की भाँति हम नहीं चिल्लाते हुए भाग खड़े होते हैं। व्याख्यान के मंच पर खड़े होकर उपदेश देने में सभी पंडित है, परंतु किसी में भी प्रत्यक्ष कृति के लिए कष्ट करने की तैयारी नही दिखाई देती। कोई भारत-दुर्दैव से बचने के लिए हाथ में चुड़ी पहनकर स्त्री-रूप में अपनी रक्षा करना चाहता हैं। एडिटर तो स्पीचों के गोलों से काम लेने की सोचता हैं। बंगाली केवल गोलमाल करके गवर्नमेंट को भयभीत करना चाहता है। कवि केवल इस विश्वास पर अपना फैसला छोड़कर कोट-पतलून पहनने की बात स्वीकारता है कि, भारत दुर्दैव उसे अंग्रेज समझकर छोड़ देगा।

शीघ्र ही भारत दुर्दैव की सहायिका डिसलायल्टी आकर इन सबको बन्दी बनाती है। दूसरा देशी मेज के नीचे घुसकर रोता है। सभापति पश्चात्ताप करता है। नाटककार ने आगे बढ़कर भारत के सहायकों का कोई शुभ एवं आशाप्रद अंत नही दिखाया है। सब सहाय्यक पकडे जाते है। यही तो भारत की दुर्दशा है कि, 'आशा की किरणों' को अन्धकार विलीन करता जाता है।

छठे अंक में भारत मूर्च्छित हो गया था। निर्लज्जता आशा उसे शरणालय में ले गई थी। किन्तु वे उसे न टिका सकीं। छठे अंक में वह मूर्च्छित पड़ा है। भारत भाग्य अकेला है जो भारत का प्रधान सहायक है, जो बार बार मूर्च्छित होनेवाले भारत को जगाने का विफल प्रयास करता है। भारत के न जगने पर वह अत्यन्त निराश और व्यथित होकर आत्मघात कर लेता है। इस प्रकार आरम्भ से अन्त तक दु:ख और निराशा का अंध:कार छाया हुआ है।

भारतभाग्य भारत को जगाता है और भारत जब नहीं जगता तब अंत में हारकर उदास होकर कहता है कि, "हाय! भारत की यह दशा क्या हो गई है, निस्संदेह परमेश्वर इससे रूठा है ?"[2] भारत के वे दिन कब लौटेंगे जब भारत पृथ्वी का शिरोमणि

---

1. गोपीनाथ तिवारी - भारतेन्दु के नाटकों का शास्त्रीय अनुशीलन - पृष्ठ - 256
2. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 155

माना जाता था। भारत ने ही अपनी विद्या से संसार में उजियारा किया है, जिससे सारा संसार काँपता था। व्यास, वाल्मिकी, कालिदास, पाणिनी, शाक्यसिंह, बाणभट्ट आदि विद्वानों के नाम से सारे संसार में भारत का सिर संसार में उँचा रहा है, उस भारत की यह दुर्दशा।

भारतभाग्य कहता है कि, "उठो! देखो विद्या का सूर्य पश्चिम से उदय हुआ चला आता है। अब सोने का समय नहीं है। अँगरेज का राज्य पाकर भी न जगे तो कब जागोगे।"[1] ज्ञान का प्रसार हो चला, सब को कुछ न कुछ करने-सुनने का अधिकार मिला, देश-विदेश से नई विद्या और कारिगरी आई।

इस बदलाव के बावजूद भी तुम्हारी वही सीधी बातें भाँग के गोले, ग्रामगीत, वही बालविवाह, भूत प्रेत की पूजा जन्मपत्री की विधि ! वही थोडे में संतोष, गप हाँकने में प्रीति और सत्यानाशी चालें। इन सबसे ऊपर उठकर अपने और अपने समाज के हित के बारे में क्यों नहीं सोचते हो। भारतभाग्य कहता है कि, 'हे भगवती राज राजेश्वरी, इसका हाथ पकड़ो।"[2] अरे कोई नहीं जो इस समय मदद करे। "हाय! अब मैं जी के क्या करूँगा, जब भारत ऐसा मेरा मित्र इस दुर्दशा में पड़ा है और उसका उद्धार नहीं कर सकता तो मेरे जीने का धिक्कार है !"[3]

आत्मग्लानि से भारतभाग्य कमर से कटार निकालकर कहता है - 'भाई, भारत ! मैं तुम्हारे ऋण से छूटता हूँ। मुझसे वीरों का कर्म नहीं हो सकता। वह पश्मेश्वर से प्रार्थना करता है कि, जन्म-जन्म मुझे भारत सा भाई मिलै। जन्म-जन्म गंगा जमुना के किनारे मेरा निवास हो।"[4] वह भारत से गले मिलता है और कहता है कि, अब मैं विदा होता हूँ। भैया, हाथ क्यों नहीं उठाते? क्या मैं इतना बुरा हूँ कि,जन्म भर के लिए मैं विदा होता हूँ, तब भी ललककर मुझसे नही मिलते।ऐसे अभागे जीवन को क्या करना है,

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 160
2. वही - पृष्ठ - 161
3. वही - पृष्ठ - 160
4. वही - पृष्ठ - 161

कहकर नही मिलते। ऐसे अभागे जीवन को क्या करना है, कहकर कटार छाती में भोंक देता है और इसके साथ ही अंक समाप्त होता है।

विशेषताएँ :

(1) 'भारत-दुर्दशा' हिंदी का सर्वप्रथम नाटक है, जिसमे राजनैतिक विषय को आधार बनाया गया है।

(2) भारतेन्दु ने अपने इस नाटक में राष्ट्रीय दुर्दशा एवं अध:पतन के कारणों का परिक्षण करते हुए राष्ट्रीय अवनति के वास्तविक एवं शोचनीय स्वरूप को स्पष्ट किया है ।

(3) भारतेन्दु ने 'भारत दुर्दशा' में प्राचीन भारत के गौरव का स्मरण दिलाते हुए वर्तमान हीन अवस्था की ओर ध्यान खींचकर उत्थान की प्रेरणा दी है एवं सुधारवादी दृष्टिकोण को आधार बनाकर कथ्य की रचना की है ।

(4) इसमें देश की पारस्पारिक फूट, कलह के परिणामस्वरूप अंग्रेजी राज्य की स्थापना और आर्थिक शोषण तथा दुरअवस्था का चित्रण किया गया है।

(5) परतंत्रता की चिरनिद्रा में सोए हुए लोगों में स्वतंत्रता की उत्कट भावना जगाकर उनमें राष्ट्रीय चेतना निर्माण करने का कार्य नाटककार ने इस नाटक के माध्यम से किया हैं।

निष्कर्ष :

भारतेन्दु ने समाज के प्रति अपने दायित्व को समझकर तत्कालीन समाज में व्याप्त सामाजिक अनिष्ट प्रवृत्तियों, धार्मिक आड़म्बरों, भीषण दारिद्रय, भ्रष्ट राजनीति, के कारण लोगों में फैली निराशा को प्रस्तुत नाटक के कथ्य द्वारा विशद किया है। उन्होंने देश को अंग्रेजों की गुलामी से बाहर निकालकर उसकी उन्नति करने की प्रेरणा दी है। लोगों की सोई हुई देशप्रेम की भावना जगाने का प्रयास किया है। पथभ्रष्ट समाज को योग्य मार्ग दिखाकर, उनके जीवन में जो अज्ञान का अंधकार फैला था, उसे ज्ञान के प्रकाशद्वारा दूर करके लोगों में नई राष्ट्रीय चेतना निर्माण की। जिससे भारतीय

जनमानस में अपने कर्तव्य के प्रति जागरूकता निर्माण होकर अपनी प्रगति करने का नया उत्साह और आत्मविश्वास निर्माण हो सके। परिणामस्वरूप उनमें राष्ट्र के प्रति जाज्वल्य देशाभिमान जागृत हो जाए। यही उद्देश्य भारत-दुर्दशा नाटक का 'कथ्य' साकार करने का प्रयास करता है।

2.1.2 'अंधेरनगरी' नाटक का कथ्य :

प्रस्तावना :

प्रस्तुत प्रहसन की रचना सन् **1881** में की गई थी। 'वैदिकी हिंसा' के पश्चात भारतेन्दु जी का यहा दूसरा प्रहसन है जो अत्यन्त लोकप्रिय है। भारतेन्दु जी ने इस प्रहसन की रचना बिहार के किसी जमींदार के अन्याय को लक्षित करके की थी। कहा जाता है कि, बिहार के एक राजा को सुधारने के लिए एक दिन में इसे रचा गया था। राजा पर इस नाटक का अभिष्ट प्रभाव पड़ा और वह सुधर गया।

'अंधेरनगरी' नाटक में वर्णित शासनकाल अत्यधिक बुरा तथा निन्दनीय है। स्वार्थी प्रवृत्ति सर्वत्र दिखायी देती है। इन स्थितियों में सामान्य जनता का ह्दयस्पर्शी वर्णन भारतेन्दु जी ने बड़े ही मार्मिक शब्दों में किया है। अंग्रेजों ने भारतियों पर टैक्स दुगुना किया और यहाँ का सारा धन इंग्लैण्ड ले गए और धन, बल, सब खा गए। भारतियों में जो एकता थी उसमें फूट डालकर उनमें जीवनभर के लिए संघर्ष का प्रत्यक्ष बोध कराने में सह्दयतापूर्वक सहाय्यता की है और जनता को अपने कर्तव्य के प्रति सजग करने का प्रयत्न किया है।

प्रथम अंक में साधु के साथ उनके दो शिष्य है।सभी एक स्वर में ईश्वर को दुहाई देते हैं।उनकी प्रशंसा के गीत गाते हैं, ईश्वर की शक्ति असीम है। भारतेन्दु ने देश में व्याप्त लोभ-लालच को त्याग कर, देश की सेवा करने का अलग - अलग भेजते है और उपदेश के तौर पर समझाते है, "बच्चा बहुत लोभ मत करना।"[1]

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 168

महंत के माध्यम से नाटककार ने यहाँ लोभ पाप का मूल है, उससे विनाश होता है और लोभ कभी नही करना चाहिए ऐसा बताया हैं।

दूसरे अंक में 'अंधेरनगरी' के बाजार का दृश्य प्रस्तुत किया गया है। कबाब का ढेर भी टके सेर बिकता है। और चने जोर गरम, नारंगी, मिठाइयाँ, कुँजड़िन का सामान आदि तथा मुगल के पाचक चूर्ण का ढेर मछली यहाँ तक कि, जाति भी टके सेर ही बिकती है। टके के वास्ते ईमान धर्म प्रतिष्ठा, कुलमर्यादा आदि सभी बिकते है। टके के वास्ते ब्राह्मण से धोबी हो जाय और धोबी को बाह्मण कर दे, टके के वास्ते पाप-पुण्य हो जाए। वेद, धर्म, कुलमर्यादा, सच्चाई-बढ़ाई सब टके सेर। टके के पीछे इस प्रकार संसार अंधा हुआ है कि, टका ही सब कुछ बन गया है।

तीसरे अंक में जंगल का दृश्य है-साधु का एक शिष्य ऐसी ही जगह रहना पसन्द करता है। पर साधु शिष्य गोबरधन को समझाने का प्रयत्न करते है। वे कहते है-जहाँ पंडित, मूरख सब एक हो, जहाँ विवेक-अविवेक का पलड़ा समान हो, जहाँ सोने की ही वृष्टि होती है, ऐसे देश में निवास करना ही नहीं चाहिए। दु:ख सहकर जीना ही जिन्दगी है और रो-रोकर प्राण देना ही सर्वोत्तम है। और गुरू उसे वही छोड़ अन्य जगह चले जाते है। वहाँ जाते समय यहा भी सुझाव देते है कि, "मुझे विपत्ति के समय स्मरण करना।"[1]

चौथे अंक में राजसभा का दृश्य प्रस्तुत है। बकरी दीवार गिरने से मरती है और यहाँ न्याय का स्वाँग मूर्खता की हद पार कर गया है। कल्लू बनिये की दीवार गिर पड़ने से किसी की बकरी दबकर मर जाती हैं। फिर्यादी न्याय माँगने के लिए राजदरबार में आता हैं। एक के बाद एक कल्लू बनिया, चूनेवाला भिश्ती, गंड़ेरिया और कोतवाल से जुर्म पूछने पर वह अपना इल्जाम दूसरे पर थोंपते है। आखिर में राजा कहता है कि, "कुछ नहीं, महाराज, महाराज ले जाओं, कोतवाल को अभी, फाँसी दो।"[2]

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 168
2. वही - पृष्ठ - 168

लोग एक तरफ से कोतवाल को पकड़ ले जाते है ओर, दूसरी ओर मंत्री को पकड़कर राजा जाते है। और इसी के साथ दरबार बरखास्त हो जाता है।

पाँचवा अंक अरण्य का है। गोबरधनदास मस्ती में अंधेरनगरी के राजा की मूर्खता आदि का वर्णन करता है। चौथे अंक के अंत में जिस कोतवाल को फाँसी की सजा को फाँसी की सजा सुनाई जाती है। गोबरधनदास घबराकर हुक्म दिया गया था। उसे निष्कासित कर दिया जाता है और उसके बदले में मोटेमल गोबरधनदास परमेश्वर की प्रार्थना करता है कि, "अरे ! मैं नाहक मारा जाता हूँ, अरे! यहाँ बड़ा ही अन्धेर है। अपने गुरू का कहना मैंने नहीं माना, जिसका फल मुझे भोगना पड़ रहा है और प्यादे लोग उसे पकड़कर ले जाते है।"[1]

भ्रष्ट शासक न्याय की हत्या इस प्रकार करते है कि, ऐसे शासन में रहना प्रजा के लिए सदैव घातक होता है।यहाँ न्याय पद्धति का इतना अंधानुकरण है कि,मूर्ख शासक न्याय शब्द का आश्रय लेकर अंधेर मचाते हैं और दोष -निर्दोष का विचार किए बिना ही निर्णय करते है।न्याय की सुनवाई उनके लिए खिलवाड़ बन कर रह गयी हैं।

छठा अंक श्मशान का है। गोबरधनदास को पकड़े हुए चार सिपाहियों का प्रवेश होता है। गोबरधनदास कहता है, मुझ बेकसूर को क्यों फाँसी देते हों। तब सिपाही उसे कहते है कि, "मैंने अपने गुरू की बात मानी होती तो मुझ पर यह आफत न आती। इस नगर का नाम अँधेरनगरी, है और राजा का नाम चौपट्ट है, तब बचने की क्या आशा है? गुरूजी गुरूजी कहकर वह चिल्लाता है, रोता है, सिपाही लोग उसे घसीटते हुए ले चलते हैं।"[2]

गुरूजी और नारायणदास वहाँ आते है। गोबरधन क्षमा याचना करते हुए अपनी गलती पर क्षमा माँगता है और फाँसी से बचाने की भीख माँगता हैं। तब गुरूजी चेले के कान में कुछ समझाते है। गुरू और शिष्य में फाँसी पर चढ़ने के लिए हुज्जत

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 181
2 वही - पृष्ठ - 182

शुरू होती हैं। सिपाही इस बात से अचरज में पड़ते है। राजा इस बात का स्पष्टीकरण माँगता है, तब उसे पता चलता है कि, सिपाही, महंत, मंत्री, गोबरधनदास कोतवाल सब फाँसी पर चढ़ने के लिए तैयार है क्योंकि इस समय ऐसा संकेत है कि, जो मरेगा सीधा बैकुण्ठ जाएगा। तब तो राजा कहते है कि, सब लोग मेरे हुक्म के अनुसार अधिकार से मुझसे छोटे ही हो और मेरे सिवाय और कौन बैकुण्ठ जा सकता है; वे स्वयं फाँसी चढ़ना चाहते है। मुझे ही फाँसी चढ़ाओ जल्दी - जल्दी कहते है।

इस अंक के अंत में महन्त कहते है कि,

"जहाँ न धर्म न बुद्धिनाहृ, नीति न सुजन समाज,

ते ऐसाहि आपु नसे, जैसे चौपट राज।"[1]

इस अंक में राजा का वही अंत हुआ है, जो एक अन्यायी राजा का होना चाहिए। नाटक के व्यंग्य द्वारा जनता के तीव्र असंतोष को प्रकट किया गया है ।

विशेषताएँ :

(1) 'अंधेरनगरी' इस प्रहसन में जितनी व्यंग्यात्मक हास्यविनोद की सृष्टि हुई है, उतनी ही राष्ट्रीयता की भावना प्रदर्शित हुई है ।

(2) प्रस्तुत नाटक में वर्णित शासनकाल अत्यंत ऱ्हासमयी दयनीय तथा निन्दनीय है ।

(3) अंग्रेजोंने हमारे देश का धन, बल, सब अपनी चतुराई से अपने देश की प्रगति के लिए उपयोग में लाया । इसे बड़े मार्मिक शैली में भारतेन्दु ने नाटक में वर्णित किया है ।

(4) देश के लोगों को अज्ञान के अँधेरे से निकालकर अपने कर्तव्य के प्रति सजग करने तथा उनमें ज्ञान का प्रकाश फैलाकर उन्नति का नया मार्ग दिखाया है ।

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 184

निष्कर्ष :

तत्कालीन जमींदारो और राजाओं की निरंकुश अँधेरगर्दी तथा मूर्खता पर व्यंग्य करते हुए भारतवासियों को राष्ट्र कर्तव्य के प्रति सर्तक एवं जागरूक करने का प्रयास किया है। एवं उनमें अपने राष्ट्र के प्रति निष्ठा, राष्ट्रीय अस्मिता व देशप्रेम की भावना को बढ़ावा देने का महान कार्य भारतेन्दु जी ने किया हैं।

इस प्रहसन में लोभ तथा विवेकहीनता के दुष्परिणामों की ओर विनोदपूर्ण ढंग से संकेत करके समाज को उससे जागृत करने का कार्य किया गया हैं। इस प्रहसन का पूरा नाम 'अंधेर-नगरी' चौपट्ट राजा, टके सेर भाजी, टके सेर खाजा' है। इसका कथानक लोक प्रचलित कथा पर आधारित हैं। राजाओं का शोखपन, मन की चंचलता एवं विलासी वृत्ति के कारण राज्य में धर्म, न्याय और सत्य की रक्षा न होकर अधर्म, अन्याय, और असत्य का ही समर्थन किया गया है। जिससे कुप्रवृत्तियों के खिलाफ जनता विद्रोह की आवाज बुलंद करे इसलिए भारतेन्दु ने नाटक जैसी दृश्यात्मक विधा को अपनाया हैं। निश्चित ही आलसी निष्क्रिय जनता पर इसका प्रभावी असर निर्माण करने का प्रशंसात्मक प्रयास उन्होंने किया था। यह प्रस्तुत कथ्य से स्पष्ट होता हैं।

2.2 वस्तुविधान :

2.2.1 पात्र :

सैद्धांतिक विवेचन :

नाटक का महत्वपूर्ण तत्व चरित्र-चित्रण है। नाटक की कथावस्तु को सक्रीय व पूर्णत्व दिलानेवाला तत्व 'पात्र' ही है। पात्रों के बिना नाटक को पूर्णत्व प्राप्त नहीं होता। इस संदर्भ में पाश्चात्य नाट्य विचारक लाजस इगरीने लिखा है कि, "Charector Makes the Plot"[1] अर्थात् नाटक का प्राणतत्व ही नाटक की कथावस्तु को बना देता है। स्पष्ट है कि, नाटक में एक मुख्य पात्र और उससे सम्बन्धित अन्य

---

1. श्री गुलाबराय - काव्य के रूप - पृष्ठ - 38

सहाय्यक पात्र अथवा एक से अधिक पात्र ही नाटक की कथावस्तु का संगठन करके कथावस्तु को विकसित करने का एवं उसे प्रारम्भ से अन्त तक ले जाने का कार्य करते हैं।

2.2.2 'भारत दुर्दशा' नाटक में चित्रित पात्र :

प्रस्तुत नाटक में 'भारत दुर्दैव', 'भारत', 'भारत भाग्य' और 'एक योगी' आदि प्रमुख पात्र है। 'सत्यानाश फौजदार', 'रोग', 'आलस', 'मदिरा', 'अंधकार', 'निर्लज्जता' आदि प्रतीक पात्र है। 'पहला देशी', 'कवि', 'एडिटर', 'डिसलायल्टी', 'बंगाली', 'महाराष्ट्री' आदि वर्ग पात्र है। इन सभी पात्रों के माध्यम को भारतेन्दु जी ने अंग्रेजों के शासनकाल में देश की जो दुर्दशा हुई थी, उसे बड़ी ही सजीवता से चित्रित किया है। कथावस्तु को सक्रीय और पूर्णत्व देने में सार्थक सिद्ध हुए है ।

2.2.2.1 प्रमुख पात्र :

'भारत दुर्दैव' :

'भारत दुर्दशा' में प्रतिनायक भारत दुर्दैव प्रमुख पात्र है। इसी को दृष्टि में रखकर नाटक का निर्माण किया गया है। 'भारत दुर्दैव' विदेशी शासकों का प्रतीक है। उसे केंद्र में रखकर कथानक का ताना-बाना बुना गया है।

'भारत दुर्दैव' अन्य पात्रों की भाँति प्रतीक पात्र है। उसकी वेशभूषा एवं उसके कथन से स्पष्ट होता है कि, भारत दुर्दैव का सांकेतिक अर्थ भारतेन्दु जी ने इस प्रकार दिया है - "मुस्लिम-अंग्रेजी शासन।"[1] उसकी वेशभूषा है, क्रूर आधा क्रिस्तानी और मुसलमानी वेष हाथ में नंगी तलवार लिए। वह कथन करता है - "काफिर काला नीच पुकारूँ।"[2] काफिर से अभिप्राय है -'मुसलमान' एवं 'काला' से ईसाई। फलत: तीसरे, चौथे और पाँचवें अंक भारत की उस दुर्दशा का चित्र है, जो मुस्लिम काल और अंग्रेजी राज्य में हुई हैं।

---

1. गोपीनाथ तिवारी - भारतेंदु के नाटकों का शास्त्रीय अनुशीलन - पृष्ठ - 257
2. वही - पृष्ठ - 257

"कौड़ी-कौड़ी को करूँ, मैं सब को मुहताज ।
भूखे प्रान निकालूँ इनका, तो मैं सच्चा राज ।। मुझे...
काल भी लाँऊ महँगी लाऊ और बुलाऊँ रोग ।
पानी उलटा कर बरसाऊँ , छाऊँ जग में सोग।। मुझे...
फूट और कलह बुलाऊँ, ल्याउँ सुरती जोर।।
घर - घर में आलस बुलाउँ छाऊँ दुख घनघोर ।। मुझे...
मरी बुलाऊँ देश उजाडूँ, महँगा करके अन्न।
सबसे ऊपर टिकस लगाऊँ, धन है मुझको धन्न।।"[1]

प्रस्तुत कथन से 'भारत दुर्दैव' की क्रूरता प्रकट होती है। कवि कहता है कि, ईश्वर का कोप ही भारत दुर्देव के रूप में आ गया है जिसने भारत को धूल में मिला दिया है।

प्रशासन रणनीति एवं व्यूह रचना में भारत दुर्दैव बड़ा कुशल है। वह अपने मित्रों को प्रसन्न करता है और शत्रुओं को कठोर दण्ड देता है। वह अपने सेना नायकों को प्रोत्साहित करता है। उसके साथी रोग, मदिरा, अंधकार, आलस, निर्लज्जता है जिनके माध्यम से वह हिंदुस्तान की दुर्दशा करना चाहता है। वह अपने सहयोगियों के प्रति उतना ही क्रूर, कठोर और कटु है। मुस्लिम एवं अंग्रेजी राजाओं की शासननीति उसी के माध्यम से स्पष्ट की गयी है। तत्कालीन भारत की विडम्बनपूर्ण, काल्पनिक, दारूण शोचनीय, अन्यायपूर्ण नीति का चित्रण उसके माध्यम से किया गया हैं।

संसार की जितनी भी कपटनीति थी उसका प्रतिनिधित्व 'भारत दुर्दैव' करता है। वह हिंदुस्तान की जनता में धर्म, जाति, वर्णभेद, और फूट आदि के माध्यम से देश की एकता खंडित कर स्वयं को सबसे बड़ा चतुर और ज्ञानी समझता है। 'भारत-दुर्दशा' इस खलपात्र के माध्यम से इन्सानों के बीच में जो एक दुष्ट प्रवृत्ति होती है, उसको उजागर किया गया है ।

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 137

भारत :

प्रस्तुत नाटक में 'भारत' एक करूण पात्र के रूप में चित्रित है। 'भारत' निर्बल, असहाय, निराश और दु:ख से भरा हुआ शोक और व्यथा से भरा पीड़ित और पददलित पात्र है।

दूसरे अंक में भारत का प्रवेश हुआ है। भारत श्मशान जैसे वातावरण और टूटे-फूटे मंदिर की हीनावस्था को देखकर अचरज में पड़ता है। और कहता है - "हा! यह वही भूमि है, जहाँ साक्षात् भगवान श्रीकृष्ण के दूतत्व करने पर भी वीरोत्तम दुर्योधन ने कहा था, 'सुच्यग्र नैंव दास्यमि बिना युद्धेन केशव' और आज हम उसी भूमि को देखते है कि श्मशान हो रही है।"[1] उसकी जो 'सश्यश्यामलता' थी वह सब नष्ट हो गयी है, मंगलता के स्थान पर सभी ओर अमंगल ही दिख रहा है।

भारत के इस वक्तव्य से स्पष्ट होता है कि, यहाँ की योग्यता, विद्या, सभ्यता, उद्योग, उदारता, धन, बल, मान, दृढ़निश्चयता, सत्य सब कहाँ गए हैं। अपने आप को वह बिल्कुल अकेला महसूस करता है, वह रो-रोकर कहता है कि, अब उसे कोई शरण देनेवाला नहीं है।अपनी इस अवस्था के लिए वह अपने नियति को दोषी ठहराता है।अंग्रेजों के शासन में हम अपने मन को इन पुस्तकों के माध्यम से बहलाएँगे और उसी में अपना सुख मानेंगे लेकिन हमारे भाग्य में वह भी नहीं है।वह बार-बार अपने नसीब को दोषी ठहराता है।

इस अवस्था के लिए वह स्वयं दोषी है।वह इतना डरपोक है कि, भारत दुर्दैव का उँचा स्वर सुनकर मूर्च्छित हो जाता है।उसकी यह मूर्छा अन्त तक नहीं टूटती। वह एक बार भी आँखे खोलकर नहीं देखता। जब बार-बार जगाने पर भी, भारत आँखे खोलकर नहीं देखता तब भारतभाग्य क्षुब्ध होकर कहता है, "अब इसके उठने की आशा नही।"[2] सच है जो जान-बूझकर सोता है उसे कौन जगा सकता है।भारत की

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 135
2. वही - पृष्ठ - 159

इसी कायरता ने भारत को आत्मघात करने के लिए मजबूर किया अगर उस वक्त भारत आँखे खोलकर दो-चार उत्साहपूर्ण शब्द कह देता, थोड़ा सा भी साहस दिखाता तो भारत भाग्य बच जाता। भारत की अपनी निर्बलता ने भारतभाग्य की जान ली।

हमारे सामने प्रस्तुत होता है कि, इस नाटक में भारत एक असहाय पात्र के रूप में हमारे सामने आता है। उसमें अन्याय, अत्याचार के प्रति विद्रोह करने की शक्ति नहीं है। उसे अपने अंदर की शक्ति पर विश्वास न होने के कारण उसका आत्मविश्वास साशंकित हैं। 'भारत' पात्र नाम से ही वह नायक होने का आभास करता है लेकिन नाटक में प्रत्यक्ष रूप में धीरोदात्त, धीरललित, धीरप्रशान्त और धीराधान्त नायकों में नही आता।

भारतभाग्य :

'भारतभाग्य' प्रस्तुत नाटक के छठे अंक का प्रमुख पात्र है। वह मूर्च्छित पड़े भारत को जगाने की कोशिश करता है। पूर्व गौरव के स्मरण के साथ वर्तमान समाज की दयनीय दशा को देखकर वह नैराश्य से व्याकुल हो उठता है। 'भारतभाग्य' भारत' से कहता है कि -

"जागो जागो रे भाई !
सोअत निसि बैस गँवाई । जागो जागो रे भाई ।।
निसि की कौन कहै दिन बीत्यो काल राति चलि आई ।
देखि परत नहिं हित अनहित कुछ परे बैरि बस जाई ।
निज उद्धार पंथ नहिं सूझत सीस धुनत पछिताई ।
अबहूँ चेति, पकरि राखो किन जो कछु बची बड़ाई ।।
फिर पछिताए कछु नहिं है रहै रहि जैहौ मुँह बाई ।
जागो जागो रे भाई ।।"[1]

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 155

वह अचेत पड़े भारत को जगाने का प्रयत्न करता है, अनेक प्रयत्नों से भी भारत नहीं जगता तब वह कहता है कि - "हा! भारतवर्ष को ऐसी मोहनिद्राने घेरा है कि अब इसके उठने की आशा नहीं। सच है, जो जान बूझकर सोता है उसे कौन जगा सकेगा?"[1] भारतभाग्य भारत को जागृत करने के अनेक प्रयत्न करता है और अंत में हारकर उदास होकर कहता है -'हाय! भारत को आज क्या हो गया है? क्या निस्संदेह परमेश्वर इससे ऐसा ही रूठा है? हाय क्या अब भारत के फिर वे दिन न आवेंगे? हाय यह वही भारत है जो किसी समय सारी पृथ्वी का शिरोमणि गिना जाता था?'[2] वह अपने योगी, ऋषि, मुनियों के संस्कारों और उपदेशों को याद कर-कर के दु:खी होता है। देश-विदेश से नया कौशल्य आया है, फिर भी भारत के लोग वही पुरानी बातें, रीति-रिवाज, रूढ़ि-परंपरा, अंधश्रद्धा में फँसे हुए है। भारतभाग्य राजराजेश्वरी से प्रार्थना करता है कि, वह भारत का हाथ पकड़े और चिरनिद्रा से जगाकर उसका उद्धार करें। भारत भाग्य इस आत्मग्लानि की आग में जलता हुआ, कमर से कटार निकालकर भारत से कहता है कि, "मैं तुम्हारे ऋण से छूटता हूँ, मुझसे वीरों का कर्म नहीं हो सकता।ईश्वर से प्रार्थना करता है कि, मुझे जन्म -जन्म भारत सा भाई मिले। गंगा-जमुना के किनारे मेरा निवास हो।"[3] आखिर कटार से छाती पर आघात कर अपने जीवन का अंत करता है।

एक योगी :

'भारत - दुर्दशा' नाटक के प्रारंभ में एक योगी गीत गाता है। भारत की दुर्दशा पर आँसू बहाता हुआ वह कहता है कि, 'आलस में डूबे हुए भारतीय भाग्यवादी है और स्वयं अपने देश की दशा सुधारने के बदले अंग्रेजों पर आस लगा कर पशु जैसा जीवनयापन कर रहे हैं। वे अपने प्राचीन गौरव को भूल गये हैं।'[4]भारतेन्दु ने इस नाटक में इस पात्र के मुख से बताया है कि, किस प्रकार भारतीय अपने प्राचीन गौरव को भूल

1. शिवप्रसाद मिश्र	- भारतेन्दु ग्रंथावली	-	पृष्ठ - 159
2. वही -		-	पृष्ठ - 155
3. वही		-	पृष्ठ - 161
4. डॉ.भावना चौधरी	- भारतेन्दु के नाटको में व्यंग्य	-	पृष्ठ - 203

गये हैं। अपनी प्राचीन सभ्यता, संस्कृति एवं समृद्धि की याद, दिलाकर भारतियों में आत्म गौरव का भाव उत्पन्न करने का प्रयत्न किया हैं।"[1]

'सबके पहिले जेहि ईश्वर धन बल दीनो।
सबके पहिले जेहि सभ्य विधाता कीनो।
सबके पहिले जो रूप रंग रस भीनो।
सबके पहिले विदयाफल जिन गहि लीनो।
अब सबके पीछे सोई परत लखाई।
हा हा ! भारत - दुर्दशा न देखी जाई ।
जहँ भए शाक्य हरिचंदरू नहूष ययाती।
जहँ राम युधिष्ठर वासुदेव सर्याती।।
जहँ भीम करन अर्जुन की छटा दिखाती।
वहँ रही मूढ़ता कलह अविदया राती ।
अब जहँ देखहु तहँ दु:ख हि दु:ख दिखाई ।
हा हा! भारत - दुर्दशा न देखी जाई ।।"[2]

योगी के उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि, संसार में सबसे पहले ईश्वर ने जिसे धन-बल दिया, जिसने सारे संसार को अपनी विद्या का दान दिया, उस भारत की यह कैसी दुर्दशा हुई है।जहाँ शाक्य, हरिश्चन्द्र, नहुष, ययाति तथा, राम, युधिष्ठिर, वासुदेव आदि महापुरूषों ने जन्म लेकर इस धरती की शान बढ़ाई, जहाँ भीम,करन,अर्जुन की छटा दिखती है, उस भारत में अब जहाँ देखो वहाँ दु:ख ही दु:ख भरा हुआ है। वेद एवं ग्रंथो कों जिन्होंने डुबाया, उन्होंने ही कलह करके यवन सैनिकों को बुलाया।अब यहाँ आलस, कुमति और अँधियारा छाया हुआ है। युद्ध के शिकार हुए अंध, पंगु, दीन, हीन लोगों की हालत दयनीय है।अंग्रेजों ने भारत का धन लुटाकार विदेश भेज

---

1. डॉ.भावना चौधरी - भारतेन्दु के नाटको में व्यंग्य - पृष्ठ - 203
2. वही - पृष्ठ - 203

दिया। महँगाई, रोग फैलाकर लोगों के दु:ख बढ़ाये। उपर से टैक्स लगाकर लोगों को लूटा। भारत की इस दुरावस्था पर योगी का हृदय विव्हल हो उठा है। वह भारत के लोगों तथा दर्शकों की इन परिस्थितियों से सजग करके उनमें जागरूकता लाना चाहता हैं।

2.2.2.2 प्रतीक पात्र :

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की राष्ट्रीयता की भावना के यथार्थ स्वरूप का परिचय 'भारत दुर्दशा' रूपक में मिलता है। प्रतीक पात्रों के माध्यम से युग की परिस्थितियों का शोचनीय चित्र व राष्ट्रीय अवनति के कारणों का उसमें विश्लेषणात्मक विवेचन किया है।

सत्यानाश फौजदार :

'सत्यानाश फौजदार' भारत दुर्दैव' का सहयोगी पात्र है, जो अपने विविध रूपों से भारत को चौपट करने आया है। वह कहता है कि, 'हमने ही सारे देश में जाति और धर्म के नाम पर भेद फैलाकर सारे देश में सामाजिक फूट, असंतोष, पक्षपात फैलाया है। भारतेन्दु ने 'भारत-दुर्दशा' नाटक में सत्यानाश 'अंग्रेजी राज' जो अपनी सत्यानाशी प्रवृत्तियों से 'भारत' की तरह-तरह से दुर्दशा किस प्रकार करते है, इसे बड़ी सजीवता से इस पात्र के माध्यम से स्पष्ट किया है, वह कहता है -

'हमारा नाम है सत्यानाश। आए हैं राजा के हम पास।
बहुत हमने फैलाए धर्म। बढ़ाया छुआछूत का कर्म ।
रचि बहु विधि के वाक्य पुरातन माँहि घुमाए ।
शैव शाक्त वैष्णव अनेक मत प्रगति चलाये ।
जाति अनेकन करी नीच अरू उँच बनायो ।
खान-पान संबंध सबन सौ बरजि छुडायौ ।
बहु देवी - देवता भूत - प्रेतादि पुजाई ।
ईश्वर सों सब विमुख किए हिन्दु घबराई ।।'[1]

---

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 138

देश और समाज के प्रति अपना कोई दायित्व न मानकर धर्माडम्बरों में लिप्त रहनेवाले हिन्दुओं पर इसी सत्यानाश पात्र के मुख से कहलवाया है-"वेदान्त ने बड़ा उपकार किया, सब हिन्दू ब्रम्ह हो गये। किसी को इतिकर्तव्यता बाकी ही न रही। ज्ञानी बन कर ईश्वर से विमुख हुए, अभिमानी हुए और इसी से स्नेहशून्य हो गये।"[1]

भारतेन्दु ने समाज का निकटता से अध्ययन किया और समाज जिस अधोगति और हीनावस्था को पहुँच चुका था उसका सजीव वर्णन अपने नाटकों में किया। उन्होंने 'भारत दुर्दशा' नाटक में 'सत्यानाश फौजदार' नामक प्रतीक पात्र कहता है कि, मैंने भारतवर्ष में बहुत से धार्मिक मत-मतान्तरों, शैव, शाक्त, वैष्णव आदि को उत्पन्न किया, बाल विवाह, बहुविवाह आदि सामाजिक कुरीतियाँ फैलायी, खान-पान सम्बन्धी की कट्टरता तथा विलायत गमन वर्जित कर कूपमण्डूकता का विस्तार किया। अनेक देवी-देवताओं, भूत-प्रेत की पूजा आरंभ करवाई और समाज को सच्चे धर्म से विमुख कर दिया। इस प्रकार सत्यानाश फौजदार ने अपनी कुमति से भारत की प्रगति में अनेक बाधाएँ निर्माण की।उसने फूट, ड़ाह, क्षोभ, उपेक्षा, स्वार्थपरता, पक्षपात, हठ, शोक, अश्रुमार्जन और निर्बलता एक दर्जन के आस पास के दूती और दूतों की फौज को मिलाकर भाषा, धर्म, चाल, अलग कर दिया। 'भारत दुर्दैव' ने सत्यानाश फौजदार' की मदद से बड़ी ही क्रूरता से भारत की दुर्दशा की जो इस पात्र के माध्यम से सजीवता एवं सटीकता से स्पष्ट हुआ है ।

रोग :

'भारत दुर्दैव' अपने सहयोगी 'रोग' की मदद से सारे देश में विविध बीमारियों को फैलाकर आतंक बढ़ाना चाहता हैं। रोग को विश्वास है कि त्रिलोक में ऐसा कोई नहीं जिस पर उसका प्रभुत्व नहीं। उसके सहारे ही ओझा, दरसनिए, डेंगू, अपाप्लेक्सी इनको भेजकर देश के लोगों को कमजोर करता हैं। रोग इतना निर्दयी है कि उसने ऐसी योजना की है कि, शीतला के डर से टीका न लगवायेंगे और अपने हाथ से ही

1. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 139

अपने प्यारे बच्चों की जान लेंगे। 'भारत दुर्दैव' रोग को सारे देश में फैलाकर समाज को आरोग्य की दृष्टि से कमजोर करके आनेवाली पीढ़ी को भी बरबाद करना चाहता है।

'आलस' :

'आलस' को सारे देश के लोगों में फैलाकर उनकी कार्यप्रवृत्ति को ही कुण्ठित करके समाज की प्रगति में बाधा डालने का काम सौंपा गया हैं । आलसियों पर व्यंग्य करते हुए भारतेन्दु ने 'भारत - दुर्दशा' नाटक में ही स्वयं आलस के मुख से कहलवाया है -

'दुनिया में हाथ - पैर हिलाना नहीं अच्छा।
मर जाना पै उठके कहीं जाना नहीं अच्छा।"[1]

भारतेन्दु युग में नैतिक मूल्यों का ऱ्हास हो रहा था। इसके साथ ही सामजिक एवं राजनैतिक चेतना के अभाव से कारण अशिक्षा, अयोग्यता, आलस और अनुदारता भारतियों के विशेष दुर्गुण बन गये थे। देश में व्याप्त निष्क्रियता और आलस पर 'भारत दुर्दशा' का सत्यानाशी फौजदार व्यंग्य कसता हुआ कहता है, "अब हिंदुओं को खाने मात्र से काम, देश से कुछ काम नहीं। राज्य न रहा, पेंशन ही सही। रोजगार न रहा, सूद ही सही। वह भी नहीं, तो घर ही का सही।"[2] 'संतोष परमं सुखम' रोटी ही को सराह-सराह कर खाते हैं। उदयम की ओर देखते हीं नहीं। निरूद्यमता ने भी सन्तोष की बड़ी सहायता की। इन दोनों को बहादुरी का मैडल अवश्य मिले।"[3] आलस की प्रवृत्तिने देश की प्रगति को किस प्रकार खंडित करके विकास में बाधा ड़ाली है इस पात्र के माध्यम से बताया है।

'मदिरा' :

भगवान सोम की यह कन्या। प्रथम वेदोंने 'मधु' नाम से इसे आदर दिया। देवताओं की प्रिया होने से यह सुरा कहलाई। संसार में चार मत प्रबल है - हिंदू,

1. शिवप्रसाद मिश्र	- भारतेन्दु ग्रंथावली	-	पृष्ठ - 144
2. डॉ.भावना चौधरी	- भारतेन्दु के नाटकों में व्यंग्य	-	पृष्ठ - 143
3. वही		-	पृष्ठ - 143

बौद्ध, मुसलमान और क्रिस्तान इन चारों में मदिरा अपना अस्तित्व जमा चुकी थी। हर कोई उसके अधीन हो गया था।

भारतेन्दु-युग में स्वेच्छाचारिता इतनी बढ़ गयी थी कि सामाजिक निषेध का मूल्य घटता जा रहा था। खान-पान, आचार-व्यवहार के मनमाने ढंग अपनाये जा रहे थे। मदिरा-सेवन की प्रवृत्ति इतनी बढ़ गयी थी कि मदिरा सेवी खुले आम मदिरा - सेवन के गुणों का बखान करते फिरते थे। अत: भारतेन्दु ने इन्हीं कुप्रवृत्तियों पर तीव्र व्यंग्य कसा हैं।

भारतेन्दु 'भारत दुर्दशा' नाटक में' सुरा' को ईश्वरतुल्य बताते हुए उसकी व्यंग्य स्तुति की है -

'दूध सुरा दधिहू सुरा, सुरा अन्न धन धाम ।
वेद सुरा, ईश्वर सुरा, सुरा स्वर्ग के नाम ।।
विष्णु वारूणी पोर्ट, पुरूषोत्तम, मदय मुरारि ।
शापिन शिव,गौडी गिरीश, ब्राण्डी ब्रम्ह विचारी ।।
मेरी तो धन बुद्धि बल, कुल लज्जा प्रति गेह ।
माय, बाप, सुत, धर्म सब मदिरा हो, न सँन्देह ।[1]

मदिरा अपने उद्भव और प्रभाव का वर्णन कुछ मदिरासेवी शिक्षितों की दार्शनिक और साहित्यिक शब्दावली के माध्यम से करती है - अंग्रेजों के शासन में मदिरा के सेवन से समाज के लोग अपने नैतिक मूल्यों को भूलकर किस प्रकार पथभ्रष्ट हुए थे इसे स्पष्ट किया है।

जिससे अंग्रेजों के शासन की मादक द्रव्य सम्बंधी नीति की पोल इस प्रकार खुलती है - 'सरकारहि मंजूर जो मेरो होत उपाय ।
तो सब सौं बढि मदय पै देती कह बैठाय ।

---

1. डॉ.भावना चौधरी - भारतेन्दु के नाटकों में व्यंग्य - पृष्ठ - 145

हम ही कों या राज की परम निसानी जान ।

कीर्ति खंभ सी जग गड़ी, जब लौ थिर ससिभान ।

राजमहल के चिन्ह नहि, मिलिहै जग इत कोय ।

तबहू बोतल ठूक बहु मिलिहै, कीरति होय।"[1]

'भारत-दुर्दैव' के साथीदार 'सत्यानाश फौजदार' ने उसके हुक्म पर अपनी सत्यानाशी चालों से भारत का सर्वनाश करने के लिए समाज के प्रत्येक स्तर में मदिरा का जाल इस तरह बिछाया है कि, उसकी लत से कोई छूटा नहीं है। सत्यानाश फौजदार कहता है -

'पिलावैंगे हम खूब शराब। करेंगे सब को आज खराब।"[2]

भारत दुर्दैव' के अनेक वीर सैनिकों में मदिरा से उसे ज्यादा आशा है। हिंदुस्तान की ओर जाने का हुक्म मिलने पर मदिरा कहती है कि, "हिन्दुओं के तो मैं मुद्दत से मुँह लगी हूँ, अब आपकी आज्ञा से और भी अपना जाल फैलाऊँगी और छोटे-बड़े सबके गले का हार बन जाऊँगी।"[3]

अंधकार :

अंधकार का जन्म सृष्टिसंहार कारक भगवान् तमोगुण जी से हुआ है। चोर, उलूक और लंपटो के लिए यह एकमात्र जीवन हैं। पर्वतों की गुहा, शौकितों के नेत्र, मूर्खो के मस्तिष्क और खलों के चित्त में अंधकार का निवास होता है। भारत के लोगों में अज्ञानरूपी अंधकार फैलाने के लिए भारत दुर्दैव ने उसे भेजा था। भारत दुर्दैव को अंधकार पर इतना विश्वास है कि - "भारत विजय के लिए बहुत लोग भेजे है पर तुम्हारे बिना सब निर्बल है।"[4] अंधकार भी उसके लिए भारत क्या, विलायत जाने लिए भी तैयार है।

---

1. डॉ.भावना चौधरी	- भारतेन्दु के नाटकों में व्यंग्य	-	पृष्ठ - 147
2. शिवप्रसाद मिश्र	- भारतेन्दु ग्रंथावली	-	पृष्ठ - 138
3. वही		-	पृष्ठ - 147
4. वही		-	पृष्ठ - 148

अज्ञानरूपी अंधकार से भारत की बुद्धि, विद्या, धन, धान सब धूल में मिल गए थे। अब राम, अर्जुन और शाक्यसिंह, व्यास का काल नहीं रहा। किसी में भी वह पौरूष साहस और विद्वत्ता नहीं रही। अंधकार के सामने सभी ने हार मान ली है। अपने देश के लोगों की संकुचित मनोवृत्ति और अज्ञान की ओर संकेत करते हुए कहा है...

'अंगरेजहू के राज पाइकै रहे कूढ़ के कूढ़ ।
स्वारथ पर विभिन्न मति भूले, हिन्दू सब है मूढ़ ।।
जग के देश बढत बदि -बदि के सब बाजी जेहि काल ।
ताहू समय रात इनको है ऐसे थे बेहाल।।"[1]

अंग्रेजों के आगमन के साथ ही नई शिक्षा का प्रसार सारे देश में हुआ, लेकिन फिर भी भारतीय अपने स्वार्थवृत्ति के कारण मूढ़ के मूढ़ ही रहे थे। उन्हें अपनी प्रगति की कोई चिंता नही थी। वे अज्ञान के अंधकार में बुरी तरह फँस गए थे। एकता के अभाव में देश की यह दुर्दशा हुई थी। इस प्रकार अज्ञानरूपी अंधकार से समाज पथभ्रष्ट हुआ था।

निर्लज्जता :

दूसरे अंक में एक ध्वस्त स्थान में हीन-दीन भारत की आर्त्त पुकार है। भारत अपनी दु:ख की गाथा सुनाते-सुनाते मूर्च्छित हो जाता है। उस सनय निर्लज्जता का आगमन होता है। वह कहती है कि, "छि : छि: जीओगे तो भीख माँग खाओगे। प्राण देना तो कायारों का काम है।"[2] वह कहती है कि "क्या हुआ अगर धन, मान सब गया एक जिंदगी हजार नेआमत है।"[3] उसके इस कथन से कठोरता, निर्लज्जता प्रकट होती है। वह कहती है कि, भारत तो सचमुच बेहोश हो गया, इसे उठाकर ले चलो, उठाने में असमर्थ होने से वह आशा को बुलाती है और दोनों मिलकर भारत को उठा ले जाती है।

---

1. डॉ.भावना चौधरी - भारतेन्दु के नाटकों में व्यंग्य - पृष्ठ - 181
2. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 136
3. वहीं - - पृष्ठ - 136

2.2.2.3 वर्ग पात्र :

पाँचवें अंक में एक बंगाली, एक महाराष्ट्री एक सभापति, एक सम्पादक, एक कवि और दो देशी महाशय इन सात सभ्यों की कमिटी है जो 'भारत' के सहाय्यक पात्र है। यह सभी नाटक के वर्ग पात्र है। इन विविध पात्रों के माध्यम से भारतेन्दु ने समाज के जो प्रतिष्ठित, व्यवसायी क्षेत्र के लोग है जो समाज सुधार की सिर्फ बातें करते हैं लेकिन जब संकट आने की संभावना को देखते है तो, उससे बचने के लिए कायरों के समान उपाय सोचते है, उन्हें बड़े ही व्यंग्यपूर्ण ढंग से स्पष्ट किया है ।

1) पहला देशी :

यह एक वास्तविक और सच्चा देशभक्त है। स्वयं नाटककार ही उसके रूप में दिखाई देता है। उसके विचारों से पता चलता है कि, वह देश की प्रगति चाहता है। वह चाहता है कि, सब लोग एकाग्र होकर नई-नई विद्याओं को व नई कलाओं को सीखे और अपनी जीवन की वास्तविकता को भी कलापूर्ण बनायें। वह अंग्रेजों के वर्ण भेद पर कड़ा व्यंग्य कसता है। वह कहता है कि, गोरा रंग कहाँ से लाये। देश के कुछ लोग अंग्रेजों से मिले हुए थे उनके प्रति रोष व्यक्त करते हुए वह कहता है कि, देशभक्ति सभाओं में भाषण देने तक ही सीमित है । जब तक कमिटी है तब तक उँचे -उँचे विचार व्यक्त किये जाते है, देश की स्थिति सुधारने के लिए सामान्य जनता को आश्वासित किया जाता है। यहाँ पहले देशी ने तत्कालीन राजनीतिक दुर्दशा पर करारा व्यंग्य कसा है, जिससे समाज अपनी परिस्थितियों से सचेत होकर उन स्थितियों को बदलने की कोशिश करे ।

2) दूसरा देशी :

दूसरा देशी का चरित्र चित्रण विशद, स्पष्ट, सुन्दर और कलात्मक हुआ है। उसे ड़र है कि हमें बड़े-बड़े आश्वासन देनेवाले लोग धोखा न दे। इस पर उसका घबराकर बुरा हाल हो जाता है। उसे लगता है कि, उसकी हृदय गति रूकनेवाली है। वह काँपने लगता है और सुझाव देता है कि - "इस बात पर बहस करना ठीक नहीं व्यर्थ

ही बात बिगड़ जाएगी।"[1] महाराष्ट्री और पुलिस कप्तान की बात सुनकर वह मेज के नीचे छिप जाता है। एडिटर के शिक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव को सुनकर तो उसके चेहरे का रंग बदल जाता है। होंठ सूख जाते है, पसीना छूट जाता है दूसरा देशी उस समय खुश होता है।तो महाराष्ट्री पुलिस अफसर को 'हुजूर', 'सर' 'सरकार' कहते हुए पैर पकड़ता है ।

3) कवि :

कवि भी तत्कालीन कवियों की प्रवृत्ति का परिचय देता है। वह कल्पना प्रधान है और साहित्यिक दृष्टिकोण से ही बोलचाल की भाषा उपयोग में लाता है। वह अंग्रेजों से बचने के उपाय बताना चाहता है तथा भारतियों की डरपोक प्रवृत्ति व उनका मुहम्मद रंगीला का रूप लेकर अंग्रेजों के लिए काव्य रचना करने की और उसके माध्यम से लोगों को अपने देश की उन्नति करने की प्रेरणा देने की सीख देता है। इस पात्र के माध्यम से नाटककार ने बताने की कोशिश की है कि, कवियों ने अपनी प्रतिभा से लोगों के मन में समाज और देश में एकता, मानवता और अपने देश के प्रति आदर की भावना जगाने के लिए अपनी साहित्य कृतियों को एक सशक्त माध्यम बनाना चाहिए। कवि आखिर में एक उपाय सोचता है जिससे भारत दुर्दैव से बचा जा सकता वह है-जब फौज इस पार उतरने लगे, कनात के बाहर हाथ निकालकर उँगली चमकाकर कहें "मुए इधर न आइयो इधर जनाने है।"[1] बस सब दुश्मन हट जाएँगे।

4) एडिटर :

एडिटर भी प्राणपण से भारत दुर्दैव को हटाने को तैयार है। वह कहता है कि, हमने इस विषय के संदर्भ मे पहले भी एकबार पत्र लिखा था, लेकिन किसीने भी गंभीरता से उस पर विचार नहीं किया। अब मुसीबत सिर पर आई, तो उपाय सोचने लगे। लेकिन अब भी कुछ नहीं बिगड़ा, वह कहता है कि, एजूकेशन को माध्यम बनाया जाय। अपने व्यवसाय की भाषा में वह कहता है कि, "कमिटी की फौज, अखबारों के

---

1. शिवप्रसाद मिश्र- भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 152
2. वही - पृष्ठ - 151

शस्त्र और स्पीचों के गोले मारे जाएँ।"[1] दूसरा देशी, महाराष्ट्री के बातों पर कहता है कि - "आप लोग नाहक इतना सोच करते हों, हम ऐसे-ऐसे आर्टिकल लिखेंगे कि, उसके देखते ही भारत दुर्दैव भागेगा।"[2]

5) डिसलायल्टी :

अंग्रेजी शासन में किसी भी भारतवासी को 'डिसलायल्टी' कहकर मजे से अपमानित किया जाता था। भारतेन्दु ने इस प्रवृत्ति को उद्घाटित करने के लिए 'भारत-दुर्दशा' में डिसलायल्टी' पात्र की सृष्टि की और उससे यह कहलवाकर अफसरशाही पर व्यंग्य किया, "भारतवासियों को दण्ड देने का अधिकार 'इंग्लिश पॉलिसी' नामक एक्ट के 'हाकिमेच्छा' नामक दफा से सरकार को है।"[3] डिसलायल्टी अर्थात् पुलिस कप्तान राजद्रोह दमन नीति का प्रतीक है। सात सभ्य लोगों की कमिटी अपने देश की प्रगति के बारे में सोचने के लिए एकत्र जमा हुई है। डिसलायल्टी को उनकी बातों पर विश्वास नहीं होता, उसे लगता है कि, यहा सब लोग सरकार के विरूद्ध ही जमा हुए है। बंगाली जब उस पर क्रोधित होता है तो डिसलायल्टी अपनी मजबूरी व्यक्त करते हुए कहता है कि - "हम क्या करें, गवर्नमेंट की पालिसी यही है। कविवचन सुधा नामक पत्र में गवर्नमेंट के विरूद्ध कौन बात थी? फिर क्यों उसे पकड़ने को हमे भेजे गए? हम लाचार हैं।"[4] भारतेन्दु युग में राष्ट्रीय चेतना को अपराध घोषित कर दमन और दण्ड द्वारा दबाया जा रहा था, 'डिसलायल्टी' उसी दमननीति का सजीव उदाहरण था।

6) बंगाली :

बंगाली के रूप मे साहसी एवं हो-हल्ला मचानेवाला देशभक्त सामने आता है। वह अपना साहस व्यक्त करता हुआ, दूसरे देशी से कहता है, "हाकिम लोग काहे

1. डॉ.भावना चौधरी	- भारतेन्दु के नाटकों में व्यंग्य	-	पृष्ठ - 187
2. शिवप्रसाद मिश्र	- भारतेन्दु ग्रंथावली	-	पृष्ठ - 152
3. डॉ.भावना चौधरी	- भारतेन्दु के नाटकों में व्यंग्य	-	पृष्ठ - 206
4. शिवप्रसाद मिश्र	- भारतेन्दु ग्रंथावली	-	पृष्ठ - 152

15890

को नाराज होगा।"[1] पुलिस को देखकर वह घबराता नहीं अपना क्रोध व्यक्त करता है। वह कहता है कि, पुलिस हमें किस अपराध के लिए पकडेगी, कानून कोई वस्तु नहीं है। वह निर्भयता से पुलिस के साथ चलने को तैयार है। विदेशी शासन से टक्कर लेने का उपाय वह बताता है कि, ब्रिटीश इंडियन लीग इ. अनेक सभाएँ होती हैं। कोई थोड़ी भी बात होती तो हम लोग बड़ा शोर करते, जब कि गवर्नमेंट तो केवल इसीसे डरती है। वह अपनी देशभक्ति प्रकट करते हुए कहता है कि - "पाँच जन बंगाली मिल के अँगरेजों को निकाल देगा।"[2] उसे अपने साहस पर पूर्ण विश्वास है।

7) महाराष्ट्री :

महाराष्ट्री सबसे अधिक साहसी और निर्भयी देशभक्त है। जब पुलिस आ जाने से सब लोग घबरा जाते है, तो महाराष्ट्री अपना क्रोध व्यक्त करता हुआ कहता है कि - "हाय, हाय! यहाँ के लोग बड़े भीरू ओर कापुरूष हैं। इसमें भय की कौन बात है! कानूनी है।"[3] अन्याय के विरोध में आवाज उठाने की उनमें क्षमता नहीं है। लोगों की कायरता पर उसे बड़ा क्रोध आता हैं। सार्वजनिक सभा की स्थापना करना, कपड़ा बीनने की कल मँगानी, हिंदुस्तानी कपड़ा पहनना, भारत दुर्दैव से विरोध करने के लिए वह यह सब उपाय सोचता है । डिसलायल्टी नियम के विरोध में महाराष्ट्री कहता है कि - "हमको भी दो हाथ दो पैर हैं। चलो हम लोग तुम्हारे संग चलते है, सवाल जवाव करेंगे।"[4] इस वक्तव्य से महाराष्ट्री में अंग्रेजों के खिलाफ लढने की क्षमता और निभर्यता से अपने विचार व्यक्त करने का प्रभावी गुण दिखायी देता है। इन बातों से सिद्ध होता है कि, उसमें स्वावलंबन और स्वदेश अनुराग की मात्रा भरी हुई है। जो उसे देशभक्त साबित करने में मदद करती है।

---

1. शिवप्रसाद मिश्र- भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 151
2. वही - पृष्ठ - 152
3. वही - पृष्ठ - 153
4. वही - पृष्ठ - 154

निष्कर्ष :

प्रस्तुत नाटक का प्रमुख पात्र 'भारत-दुर्दैव' प्रतिनायक के रूप में दिखाया गया है। जो अपने सहयोगियों की मदद से 'भारत' की दुर्दशा करके उसे पूरी तरह कमजोर बनाता हैं। 'भारत' की दुर्दशा करके उसे पूरी तरह कमजोर करता हैं। 'भारत' यह एक करूण पात्र हैं जो अत्यंत निर्बल, असहाय, अशक्त, निराश और दु:ख से भरा हुआ पीड़ित और पददलित पात्र हैं। वह अपनी दुर्दशा करनेवाले अपने शत्रुओं का साहस के साथ मुकाबला करने की अपेक्षा रखता है। वह रो-रोकर ईश्वर से मदद की याचना करता हैं। 'भारतभाग्य' यह पात्र प्रस्तुत नाटक के छठे अंक का प्रमुख पात्र है, वह मूर्च्छित पड़े भारत को जगाने के लिए, अपने अतीत कालीन गौरव की याद दिलाकर उसमें आत्मविश्वास भरने की कोशिश करता हैं। अंत में भारत के न उठने पर आत्मग्लानि से कटार से छाती पर आघात कर अपने जीवन का अंत करता हैं। नाटक के प्रारंभ में योगी अतीतकालीन गौरवशाली भारत की याद दिलाकर तत्कालीन देश की जो दुर्दशा थी उस पर शोक व्यक्त करते हुए भारत के लोगों और दर्शकों को सजग करके उनमें जागरूकता निर्माण करता हैं।

प्रतीक पात्रों के माध्यम से भारतेन्दु ने तत्कालीन युग की परिस्थितियों का शोचनीय चित्र एवं राष्ट्रीय अवनति के कारणों का विश्लेषणात्मक विवेचन किया है। वे पात्र है - 'सत्यनाश फौजदार' जो भ्रष्ट पुलिसी व्यवस्था का प्रतीक है, वह अपने विविध रूपोंसे भारत को चौपट करने के लिए आया था। 'रोग' अपने आतंक को सारे देश में फैलाकर आनेवाली नई पीढ़ी को कमजोर व बरबाद करना चाहता हैं। भारत दुर्दैव चाहता है कि, 'आलस' अपनी आलसी प्रवृत्ति को सारे देश में फैलाकर उनकी कार्य प्रवृत्ति को ही कुण्ठित करना चाहता हैं। 'मदिरा' अपने व्यसन से देश के सारे लोगों को डुबोना चाहती है, जिससे उनकी प्रगति में बाधा पड़ जाएँ। भारत के लोगों को अज्ञान के अंधकार में गुमराह करने के लिए भारत दुर्दैव 'अंधकार' इस पात्र को यह काम

सौंपता है। भारत के लोगों में जो लाचारी थी, उसे 'निर्लज्जता' पात्र के माध्यम से स्पष्ट किया गया हैं।

प्रस्तुत नाटक के पाँचवें अंक मे सात सभ्य लोगों की एक कमिटी है, जिसमें एक बंगाली, एक महाराष्ट्री, एक सभापति, एक सम्पादक, एक कवि और दो देशी महाशय है। यह सब वर्ग पात्र है। भारतेन्दु ने इन विविध पात्रों के माध्यम से समाज के पढ़े-लिखे लोग जो देश की दुरावस्था को सुधारने के लिए कौनसे उपाय सोचते है इसे बताया है। वे स्वयं को बड़े ज्ञानी समझते थे और देशोद्धार की बातें करते थे, लेकिन प्रत्यक्ष रूप में कुछ करने में असमर्थ थे। वार्तालाप, भाषणबाजी और एक दूसरे की छींटाकशी आदि कायरतापूर्ण कार्यो में ही मग्न रहते थे, देश की उन्हें जरा भी चिन्ता नही थी, न उनमें देश के प्रति कर्तव्यपरायणता थी ।

इस प्रकार इन सभी पात्रों की सहायता से पराधीनता के उस समय में देश की जो दुर्दशा हुई थी, उसे अंग्रेजी शासन तथा वे स्वयं भी किस प्रकार जिम्मेदार थे इसे बताने में भारतेन्दु जी को यश मिला और इन पात्रो के माध्यम से उन्होंने देश की जनता में राष्ट्रीय नवजागरण चेतना भरने का स्तुत्य कार्य किया।

2.2.3 'अंधेरनगरी' नाटक में चित्रित पात्र :

प्रस्तावना :

'अंधेर नगरी' यह भारतेन्दु का अत्यंत लोकप्रिय प्रहसन है। जिसके प्रमुख पात्र है - 'राजा', 'महंत' 'गोबरधनदास' 'नारायणदास' आदि। 'राजा' यह प्रमुख पात्र प्रतिनायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो 'अंग्रेजी राज' का प्रतीक है। नाटक का प्रारंभ 'महंत' इस पात्र के गीत से होता है। प्रस्तुत पात्र के माध्यम से भारतेन्दु ने अंग्रेजों की राजनीति और शोषण से बचने के लिए लोभ-लालच, स्वार्थ से दूर रहने का संदेश समाज को दिया है। महंत के दो शिष्यों में से एक है 'गोबरधनदास' जो धन का लालची है, यही लालच उसे फाँसी के फंदे तक ले जाता है। दूसरा शिष्य 'नारायणदास' जो अपने गुरू की बात मानकर संकट से बच जाता है। इन सभी प्रमुख पात्रों के साथ ही

गौण पात्र-कबाबवाला, चनेवाला, नारंगीवाला, हलवाई, मछलीवाली, कुँजड़िन, मुगल, पाचकवाला, जातवाला आदि है जो सब, बाजार में आवाज लगा लगाकर अपनी मौल्यवान वस्तुएँ टके सेर बेचते हैं। इन सभी पात्रों के माध्यम से अंग्रेजों के राज में देश में जो 'अंधेरगर्दी' का वातावरण था, उसे दर्शाने में भारतेन्दु को यश प्राप्त हुआ हैं।

2.2.3.1 प्रमुख पात्र :

'राजा' :

'अंधेरनगरी' का राजा एक प्रतिनायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वह विलासी है। नाटककार ने एक पत्थर से दो पक्षी मारे है। नाटक में भारतीय राजा नायक बना है। किन्तु आरम्भ से अन्त तक एक ही संकेत है -'अंग्रेजों का।' अत: अंधरेनगरी है -अंग्रेजों का राज्य और चौपट राजा है - 'अंग्रेजी सरकार - जो भारत को विलासी बनाकर चौपट कर रही है।"[1]

प्रस्तुत नाटक में एक भारतीय राजा के न्याय-प्रणाली की निन्दा की गई है।इसमें कुछ ऐसे प्रसंग है जिनसे राजा की मूर्खता का परिचय मिलता है। राजा की न्यायप्रणाली में न्याय के नाम पर जनसामान्य की बलि चढ़ती थी। वह मनोरंजन का साधन बनता था। राजा की इसी अंधी न्यायप्रणाली का चित्रण 'अंधेरनगरी' के दृश्य के चौथे अंक में प्रस्तुत किया है। राजा स्वयं मूर्ख एवं अज्ञानी, अविवेकी एवं मद्‌यप है जो कि, न्याय के लिए बैठा है। उसकी न्यायव्यवस्था भी मूर्खतापूर्ण है।

बकरी दीवार के गिरने से मरती है और यहाँ राजा के न्याय का स्वाँग मूर्खता की हद को पार कर गया है। वह क्रमश : कल्लूबनिया, कारीगर, चूनेवाला, भिश्ती, कसाई, गंड़ेरिया, मसक बनाने वाले को एक-एक करके बुलाता है, किन्तु उनके एक-दूसरे पर दोषारोपण कर स्वयं को निर्दोष सिद्‌ध कर देने से कोतवाल को फाँसी की सजा का आदेश देता है। फाँसी का फंदा बड़ा होने पर कोतवाल बच जाता है और

1. गोपीनाथ तिवारी - भारतेन्दु के नाटकों का शास्त्रीय अनुशीलन - पृष्ठ - 302

उसके स्थान पर मोटे व्यक्ति की तलाश में गोबरधनदास को पकड़ा जाता हैं। क्योकि न्याय के नाम पर किसी न किसी को दंड मिलना आवश्यक है अन्यथा न्याय न होगा। ऐसे राजा के शासन में रहना प्रजा के लिए सदैव घातक है। यही शासन पद्धति अंग्रेजों की रही थी।

'अंधेरनगरी' के दृश्य कें चौथे अंक में बकरी के मरने के कारण किसी को फाँसी देनी है, तो 'गोबरधनदास' जो कि, निर्दोष है,जिसका बकरी से किसी प्रकार का सम्बन्ध भी नहीं है,उसे फाँसी देने का फैसला है।इस प्रकार तत्कालीन समाज में अंग्रेजी राज्यकर्ताओं के राज्य में निर्दोषों को फाँसी देने एवं उन पर जुल्मो सितम ढाने के सरकार के व्यवहार पर भारतेन्दु ने कड़ा व्यंग्य किया है।उस समय के राजा को अपने ही अधिकारियों एवं अपनी जनता के द्वारा आसानी से मूर्ख बनाया जा रहा था।उन्होंने कचहरियों के न्याय पर चोट् की है, जिससे तत्कालीन जीवन का यथार्थ चित्र उभरता है।राजा के हुक्म पर अधिकारी मनमानी करके मजे में रहकर अपना स्वार्थ सिद्ध करते थे।

इस प्रहसन में ऐसे राजा के चरित्र का व्यंग्यात्मक चित्रण किया है, जिसके राज्य में सब वस्तु टके सेर बिकती है -

'अँधेर-नगरी अनबुझ राजा ।
टके सेर भाजी टके सेर खाजा।"[1]

इस नगरी मे सब धन बाईस पसेरी बिकते है। न्याय की आशा ही क्या? जैसा मन आया राजाने न्याय कर दिया। यह किसी भारतीय राजा की न्याय प्रणाली की निन्दा नहीं की गई है बल्कि अंग्रेजी शासनव्यवस्था पर गहरा प्रहार किया गया है।

भारतेन्दु काल में अंधभक्ति एवं अंधविश्वास की जडें गहरी हो गई थी। सोचने-समझने एवं तर्क सम्मत बात करने की किसी में भी बौद्धिक एवं मानसिक स्थिति

---

1. भावना चौधरी - भारतेन्दु के नाटकों में व्यंग्य - पृष्ठ - 206

नही थी। भारतेन्दु ने 'अंधरेनगरी' के अंतिम दृश्य में गुरू के संदेशद्वारा बताया है -

"जहाँ धर्म न बुद्धि नहिं नीति न सुजन समाज।

ते ऐसहिं आपुहि नसै, जैसे चौपट राज।।[1]

राजा की न्यायव्यवस्था में बकरी मारने की सजा किसी को तो देनी ही थी। राज्य का कोई भी व्यक्ति फाँसी चढ़कर मरने के लिए तैयार नहीं था लेकिन महन्त ने कहाँ कि, जो कोई फाँसी पर चढ़ेगा उसे बैकुण्ठ नसीब होगा। इस बात पर अंधविश्वास का शिकार होकर राजा स्वयं फाँसी जाने के लिए उतावला होकर सजा का हकदार होता है। अत: स्पष्ट हो जाता है कि नाटक के राजा का वही अंत हो जाता है जो एक दुष्ट राजा का होना चाहिए। यह नाटक जनता के तीव्र असंतोष को प्रकट करता है। तथा जिसे शत्रु समझती थी, उसका यह अंत देखकर हर्षित हो जाती है ।

इस प्रकार प्रस्तुत पात्रो के माध्यम से भारतेन्दु ने तत्कालीन अन्यायी राज्यव्यवस्था और हीनबुद्धि राजाओं की मूर्खता का पर्दाफाश कर, राजा के इस प्रकार के अंत द्वारा दुष्ट राजाओं,अन्यायकर्ताओं का वही अन्त दिखाया है जो होना चाहिए।

महंत :

नाटक के प्रारंभ में ही महंत अपने शिष्यों के साथ गीत गाता हुआ आता है । राम नाम की महिमा गाते हुए कहता है कि-'राम भजो राम भजो राम भजो भाई।"[2] राम नाम के भजन से सब बिगडें हुए काम बन जाएँ, सभी पापों से मुक्ति मिल जाएँ। महंत के इस वक्तव्य से परमेश्वर के प्रति उसकी श्रद्धा दिखायी देती है। अपने शिष्यों को वह सन्मार्ग पर चलने की शिक्षा देता है।

महंत अपने दो शिष्यों को नगर में भिक्षा माँगने के लिए भेजता है और कहता है - "इस सुंदर नगर से जो कुछ मिलेगा, परमेश्वर को भोग लगाएँगे।"[3] लेकिन वह अपने शिष्यों को सलाह देता है कि, बच्चा बहुत लोभ मत करना ।

1. शिवप्रसाद मिश्र- भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 184
2. वही - पृष्ठ - 167
3. वही - पृष्ठ - 167

देखना, हाँ -

"लोभ पाप का मूल है, लोभ मिटावत मान ।

लोभ कभी नहीं कीजिए, यामैं नरक निदान।।"[1]

भारतेन्दु ने महंत पात्र के माध्यम से तत्कालीन समाज को लोभ से बचने का संदेश दिया हैं। अंग्रेजों के शासन में लोगों की आर्थिक स्थिति बिकट थी, इसी आर्थिक विपन्नता के शिकार हुए लोग अपनी जरूरतों की पूर्ति के लिए बुरे मार्ग का भी स्वीकार करते है। कष्टों के बिना ही बहुत कुछ प्राप्त करने की लोगों की वृत्ति बन गयी थी। अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए, लोग किसी भी प्रलोभन का शिकार होते थे और ठगे जाते थे।

महंत अपने शिष्यों के पास इतनी बड़ी मात्रा में भिक्षा देखकर कहते है कि, "यह कौनसी नगरी है और इसका कौनसा राजा है, जहाँ टके सेर भाजी और टके सेर खाजा है?"[2] गोबरधनदास उत्तर देता है कि, 'अंधेरनगरी चौपट राजा , टके सेर भाजी टके सेर खाजा।' महंत कहता है -

सेत सेत सब एक से, जहाँ कपूर कपास ।

ऐसे देस कुदेस में, कबहु न कीजै बास ।।

कोकिल बायस एक सम, पण्डित मूरख एक ।

इन्द्रायन दाडिम विषय, जहाँ न नेकु विवेक ।।

नसिए ऐसे देस नहिं, कनक वृष्टि जो हाय।

रहिए तो दुख पाइये, प्रान दीजिए रोय ।।[3]

भारतेन्दु ने 'महंत' इस पात्र के संदेश द्वारा देश की जनता को यह संदेश दिया है कि-जहाँ पण्डित, विद्वान, मूर्ख आदि सभी एक ही तराजू में तोले जाते है, जहाँ सच्चाई, बड़ाई, न्याय-अन्याय, धर्म-अधर्म, विवेक-अविवेक सब का मूल्य एक ही हो

---

1. शिवप्रसाद मिश्र- भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 168
2. वही - पृष्ठ - 173
3. वही - पृष्ठ - 173

ऐसे नैतिक मूल्यों से विहीन जगह रहना उचित नहीं।अगर रहें तो पश्चात्ताप के सिवाय कुछ हासिल नही होगा। फिर भी महंत का एक शिष्य गोबरधनदास धन के लालच में उस 'अंधेरनगरी' के मोहजाल में फँस जाता हैं और फाँसी की सजा का हकदार बनता हैं।क्षणिक सुख के मोह में फँसे अपने शिष्य को महंत अपनी चतुर बुद्धि से बचाता है।

सत्य और धर्म की परीक्षा की आड़ में न जाने कितने व्यक्ति उस वक्त ठगे जाते थे। प्रत्येक हिन्दू का विश्वास था कि, जब तक भगवान की कृपा नहीं होती, तब तक कर्मफल से मनुष्य को बार-बार भिन्न-भिन्न योनियों से जन्म लेना पड़ता है। स्वर्ग, नरक तथा मोक्ष के बारे में वह बहुत गहराई से सोचता था और मृत्यू के उपरान्त उस लोक में पुण्यवान आत्माओं से मिलने की आशा रखता था। महंत ने राजा के इसी अंधविश्वास का फायदा उठाकर, बैकुण्ठ प्राप्त करने की बात करके राजा को स्वयं की तत्कालीन समाज को अंग्रेजों के शोषित शासन और धर्मांधता से बचने का संदेश दिया।

महंत के शिष्य - गोबरधनदास और नारायणदास :

'अंधेरनगरी' नाटक में महंत के दो शिष्य है।एक गोबरधनदास और दूसरा नारायणदास।महंत अपने शिष्यों को लोभ से बचने की सीख दिलाते हुए भिक्षा के लिए एक नगर में भेजते है। गोबरधनदास पश्चिम की ओर जाता है और नारायणदास पूरब की ओर।

'गोबरधनदास' इस पात्र के माध्यम से भारतेन्दु ने तत्कालीन समाज के लोग लोभ में फँसकर सजा के हकदार कैसे बनते थे, इसे दर्शाया है। गोबरधनदास उस नगर के बाजार में भिक्षा माँगने के लिए जाता है। जहाँ कबाबवाला, चनेवाला, नारंगीवाला, हलवाई, कुँजड़िन, मुगल, पाचकवाला, मछलीवाला जातवाला (ब्राह्मण), बनिया आदि सभी अपनी मौल्यवान वस्तुएँ टके सेर बेचते है। गोबरधनदास को जब इसी बात का पता चलता है तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। कुँजड़िन और हलवाई को वह फिर

से पूछता है कि - 'यह कौनसी नगरी है, और यहाँ का राजा कौन है?'[1] तब हलवाई बताता है कि, 'अंधेरनगरी चौपट्ट राजा, टका सेर भाजी टका सेर खाजा।'[2] गोबरधनदास तो इस बात को सुनकर बड़ा खुश होता है। वह उस अंधेरनगरी से भिक्षा माँगकर सात पैसे लाता है और हलवाई से साढ़े तीन सेर मिठाई लेता है। वह अपने गुरू की बात न मानकर धन के लालच में उसी अंधेरनगरी में फँस जाता है।

'अंधेरनगरी' के चौपट राजा की न्यायप्रणाली भी अंधतापूर्ण थी ।वहाँ दोष-निर्दोष को देखे बिना ही न्याय होता था। जिसकी शिकार गोबरधनदास हो जाता है। बकरी दीवार गिरने से उसके नीचे दबकर मर जाती है और इसका अपराध किसी के तो सिर थोंपकर राजा के हुक्म पर फाँसी की सजा को अंजाम देना था। इसलिए फाँसी का फंदा बड़ा होने के कारण मोटेमटोल गोबरधनदास को फाँसी के लिए चुना जाता है। भारतेन्दुने इस पात्र के माध्यम से वास्तविकता पर प्रकाश डालते हुए यह स्पष्ट किया है कि, समाज लोभ में फँसकर किस प्रकार दुर्दशाग्रस्त हो जाता है।समाज को इस प्रकार के लालच में न फँसकर अपनी उन्नति के लिए दक्ष होने की प्रेरणा दी है ।

महंत के दो शिष्यों में से दूसरा है ' नारायणदास'। उसे भी माँगने के लिए भेजते हैं। भिक्षा माँगने के लिए जाते समय अपने गुरू ने जो लोभ न करने का उपदेश दिया था। महंत ने एक दोहे में कहा था -

"सेत सेत सब एक से, जहाँ कपूर कपास ।
ऐसे देस कुदेस में, कबहु न कीजै बास ।।
कोकिल बायस एक सम, पण्डित मूरख एक ।
इन्द्रायन दाड़िम विषय, जहाँ न नेकु विवेक ।।
बसिए ऐसे देस नहिं, कनक वृष्टि जो होय।
रहिए तो दुख पाइये, प्रान दीजिए रोय ।।"[3]

---

1. शिवप्रसाद मिश्र- भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 172
2. वही - पृष्ठ - 172
3. वही - पृष्ठ - 173

इस दोहे से नारायणदास पर उचित प्रभाव होकर वह उस 'अंधेरनगरी' से अपने गुरू के साथ बाहर चला गया, जिससे वह उन सभी संकटों और फाँसी की सजा से बच गया। भारतेन्दु ने इस पात्र को आज्ञाधारी दिखाकर गुरू-शिष्य के पवित्र बंधन की महिमा को उजागर किया है। यह पात्र हिंदुस्तानी होने के नाते अपने हिंदुत्व की रक्षा के लिए प्रयत्नरत दिखायी देता है। जिससे पता चलता है कि, उस समय कुछ ऐसे भी लोग थे, जिनके मन में देश प्रेम की भावना थी, उन्हें देश के प्रति आदर एवं सम्मान था। जो देशहित के बारे में सोचकर लोभ लालच से कोसों दूर रहकर देशोन्नति के लिए प्रयत्न करते थे।

2.2.3.2 गौण पात्र :

'अंधेरनगरी' नाटक के गौण पात्र भी नाटक की कथावस्तु के संगठन में उतने ही महत्वपूर्ण है जितने की प्रमुख पात्र नाटक के तीसरे दृश्य में बाजार का वातावरण चित्रित करते हुए कबाबवाला, चनेवाला, नारंगीवाला, हलवाई, कुँजड़िन, मुगल पाचकवाला, मछलीवाली, जातवाला (ब्राह्मण), बनियाँ आदि सभी अपने-अपने वस्तुओं को बेचने के लिए बाजार में उतर आए हैं, जो अंग्रेजी शासनव्यवस्था और तत्कालीन समाज के बदलते स्वरूप पर करारा व्यंग्य करते हैं। चौथे दृश्य में राजसभा का वर्णन करने में फर्याद लेकर आनेवाला व्यक्ति करने में, कारीगर, चूनेवाला, भिस्ती, कसाई, गंडेरिया, कोतवाल, मंत्री, एक प्यादा, दूसरा प्यादा, दो सिपाही आदि अन्य गौण पात्र जो राजाओं की दोष-निर्दोष को देखे बिना शिक्षा देने की न्यायप्रणाली को स्पष्ट करती है।

1) कबाबवाला :

कबाबवाला कहता है कि - "कबाव चौरासी मसाले डालकर गरमा - गरम तैयार किया है । इसे जो खायें होंठ चाटै, न खायें वो जीभ काटै।"[1] क्योंकि वह कबाब का ढेर टके सेर बेच रहा है ।

---

1. शिवप्रसाद मिश्र- भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 169

2) चनेवाला :

'अंधेरनगरी' अंग्रेजी राज्य का ही दूसरा नाम है। भारतेन्दु कालीन समाज का ढाँचा पूरी तरह ध्वस्त हो चुका था। समाज अनेक बुराइयों में उलझ चुका था। उनमें से एक बुराई थी-वैश्याओं का आकर्षण। उस समय अनेक स्त्रियाँ अत्यन्त निर्लज्जता और आश्चर्यजनक साहस के साथ वैश्या बनकर केवल पेट ही नही भरती थी, बल्कि बड़ी-बड़ी जागीरें और जायदादें भी खरीदती थी। जिस इज्जत को समाज की स्त्रियाँ प्राण देकर भी रक्षा करती थी, उसे ही यह वैश्याएँ खुल्लम खुल्ला बाजारभाव से बे-रोक टोक बेचती थी। इसीलिए तो कुछ वस्तुएँ भी उनके नाम बिकती थी -

"चना खावै तौकी मैना। बोलैं अच्छा बना चबैना।।

चना खायँ गफूरन मुन्ना। बोलैं और नहीं कुछ सुन्ना।।[1]

घासीराम चनेवाला कहता है कि, सब जाति - धर्मो के लोग चने खाते है, चाहे बंगाली हो या जुलाहे अर्थात् अंग्रेजी शासन व्यवस्था के इस अंधेरगर्दी में समाज के सभी वर्गो के लोग समाविष्ट थे ।

3) नारंगीवाली :

नारंगीवाली कहता है कि -"यह नरंगी बुटवल की है, रामबाग और आनन्द बाग की है। इस नरंगी को पीकर लोग संगी -साथियों को भूल जाते है और अपने में हो मस्त होकर बेफिक्र रहते है।"[2] उन्हे अपने तथा देश की बुरी स्थितियों का भी ध्यान नहीं हैं ।

4) हलवाई :

वह कहता है कि - "जलेबियाँ, लड्डू, गुलाब जामुन, खुरमा, बुंदिया, बरफी, पकौड़ा, हलुआ, कचौड़ी आदि मिठाइयाँ घी और चीनी ड़ालकर बनायी है। इसे जो खाये वे पछताय और न खाय सो भी पछताय।"[3] वह कहता है कि - "हलवाई की

1. शिवप्रसाद मिश्र- भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 169
2. वही - पृष्ठ - 169
3. वही - पृष्ठ - 169

ऐसी जात है जिसके छत्तिस कौम भाई हैं। जैसे कलकत्ते के विलसन, मन्दिर के भितरिए अर्थात् पुजारी, उसी तरह अंधेरनगरी के हम है।"[1] इस अंधेरगर्दी में समाज के सभी स्तरों के लोग शामिल है, इस बात को वह बताना चाहता हैं।

5) कुँजड़िन :

कुँजड़िन कहती है कि, अंधेरनगरी के सब्जीमंडी में सब सब्जियाँ टके सेर है। अंग्रेजों की शासनव्यवस्था का उसने वर्णन किया है -

"जैसे काजी वैसे पाजी।

रैयत राजी टके सेर भाजी।"[2]

अंग्रेजों की शासनव्यवस्था में उनकी तरह ही देशी राजाओं की शासनप्रणाली थी और सामान्य जनता के अधिकारों का, सुख-दु:ख का कुछ विचार नहीं था। देशी राजाओं को सिर्फ मद्यपान करना, विलासी जीवन व्यतीत करना व प्रजा पर अधिकार जमाना यहीं सब पसंद था। कर्तव्य परायणता की कोई गुंजाइश उनमें नही थी। समाज का नैतिक और सामाजिक स्तर इसी कारण बिगड़ता जा रहा था। कुँजड़िन कहती है कि -'ले हिन्दुस्तान का मेवा फूट और बैर।'[3] भारतेन्दु ने अंग्रेजों की जो कुटनीति थी-फूट डालों और शासन करों, इस नीति को उजागर किया है। अंग्रेजोंने भारत में फूट और अलगाव की नीति अपनाकर भारत की एकता को खण्डित कर दिया। फूट और बैर की नीति सारे देश में व्याप्त हो रही थी, तभी तो कुँजड़िन उसे 'मेवा' कहकर सम्बोधित किया करती है।

6) मुगल :

भारतेन्दु ने 'अंधेरनगरी' इस प्रहसन में अंग्रेजों के राज्य की कड़ी आलोचना की है। नाटक के बाजार के दृश्य में शासनव्यवस्था जिसमें अंग्रेजी अफसरों के भ्रष्ट एवं शोषित शासनव्यवस्था का चित्रण मिलता है। ब्रिटीश और अफगाणिस्तान के

1. शिवप्रसाद मिश्र- भारतेन्दु ग्रंथावली	-	पृष्ठ - 169
2. वही	-	पृष्ठ - 170
3. वही	-	पृष्ठ - 170

मध्य चल रहे युद्ध के दौरान ब्रिटीश राज्य सत्ता की हार हुई थी, उसका वर्णन भारतेन्दु ने बादाम पिस्तेवाले मुगल के माध्यम से इस प्रकार किया है -

"आमरा ऐसा मुल्क जिसमें अंगरेज का भी दाँत कट्टा ओ गेया। नाहक को रूपया खराब किया।"[1]

7) पाचकवाला :

भारतेन्दु ने तत्कालीन वर्ग विशेष की भावधारा को व्यक्त करते हुए उस युग के सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक वातावरण को चित्रित करने के लिए, उन विषम परिस्थितियों में भी ग्रामीण और अनपढ़ जनता की भी समझ में आनेवाली बाते लिखकर समाज सुधार के लिए नए ढंग के लोकसाहित्य की रचना की। गाली गलौच के अश्लील शब्दों का उपयोग करने की अपेक्षा उन्हीं के घरों में बोले जानेवाले कृष्ण मुरारी, श्यामसलोना आदि शब्दों को रख दिया -

"चूरन अमल वेद का भारी, जिसको खाते कृष्णमुरारी ।
मेरा पाचक है पचलोना, जिसको खाता सलोना ।।"[2]

'चूरन' अंग्रेजी शासन की उन सभी बुराइयों का प्रतीक है, जो उस समय समाज में फैली थी। चूरन जब से हिंदुस्तान में आया है, तब से लोगों को आर्थिक, सामाजिक नैतिक परिस्थितियों को उसने प्रभावित किया था और जनता धन, बल विहिन हो गयी थी।समाज में विवाहित स्त्रियों की अपेक्षा वैश्याओं को अधिक महत्व था। अंग्रेजों के शासन में घूस का प्रचलन खूब चल रहा था। रिश्वत को सशक्त साधन बनाकर लोगों को लूटने का कार्य वे करते थे। इतना ही नहीं समाज में प्रतिष्ठित समझे जानेवाले पूँजिपति भी अपने ही देश के लोगों का आर्थिक शोषण कर रहें थे। पैसों को ही सबकुछ समझा जाने लगा था।

---

1. शिवप्रसाद मिश्र- भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 170
2. वही - पृष्ठ - 170

व्यापारी और महाजन तो किसी व्यक्तिद्वारा जमा कराये पैसे उसकी अमानत न समझकर उस पर अपना ही अधिकार जमाते थे। गरीबों की मेहनत से जमा की गई पूँजी यह प्रतिष्ठित समझे जानेवाले लोग हड़प कर जाते थे। इस प्रवृत्ति पर भारतेन्दु ने कड़ा प्रहार करते हुए लिखा है -

"चूरन सभी महाजन खाते,
जिसमें जमा हजम कर जाते।
चूरन खाते लाला लोग,
जिसको अकिल अजीरन रोग।"[1]

समाज में स्थित विविध सामाजिक वर्ग जैसे कलाकार, एडिटर, भ्रष्ट पुलिस, रिश्वतखोर अफसर, भारत-शोषक, अंग्रेज आदि को भारतेन्दु चूरनवाले की भाषा में वर्णित करते हुए भारतेन्दु कहते है -

"चूरन अमले सब जो खावैं । दूनी रूशवत तुरत पचावैं ।
चूरन नाटकवाले खाते । इसकी नकल पचाकार लाते ।।
चूरन खावै एडिटर जात । जिनके पेट पचै नहिं बात ।।
चूरन साहब लोग जो खाता । सारा हिन्द हजम कर जाता ।।
चूरन पुलिसवाले खाते । सब कानून हजम कर जाते ।
ले चूरन का ढेर, बेच टके सेर ।।"[2]

इस प्रकार भारतेन्दु ने 'चूरनवाले' के माध्यम से समाज के उन सभी स्तरों के प्रतिष्ठित लोगों की शोषक प्रवृत्ति को उजागर किया है जो अपने ही देश को लूटने में अंग्रेजों की मदत कर रहें थे ।

---

1. डॉ भावना चौधरी - भारतेन्दु के नाटकों में व्यंग्य - पृष्ठ - **123**
2. शिवप्रसाद मिश्र - भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - **171**

8) मछलीवाली :

मछलीवाली अपनी मछली के वर्णन के माध्यम से उस समाज का अत्यंत सजीव और रोचक वर्णन करती है। वह कहती है कि, जिस तरह मछली जाल में फँस जाती है, उसी तरह यह समाज अनेक बुरी प्रवृत्तियों में फँस गया है ।
वह इसका वर्णन करती है -

"मछरिया एक टके कै बिकाय ।
लाख टका ले वाला जीवन, गांहक सब ललचाय ।
नैन मछरिया रूप जाल में, देखतही फंसि जाय ।
विनु पानी मछरी सो बिरहिया, मिले बिना अकुलाय।।[2]

9) जातवाला (ब्राह्मण) :

ब्राह्मणों और पुरोहितों के वर्ग का हिन्दु समाज पर धार्मिक शासन था। उनका कार्य था स्वधर्म की शिक्षा देना, सत्कर्म करने की प्रेरणा देना, सत्य का मार्ग दिखाना। लेकिन भारतेन्दु कालीन धार्मिक परिस्थितियाँ किस हद तक बिगड़ चुकी थी, इसे उन्होंने इन शब्दों में बताया है -

"जात ले जात, टके सेर जात।
एक टका दो हम अभी अपनी जात बेचते हैं।"[2]

ब्राह्मण वर्ग का धार्मिक दृष्टि से चारित्रिक पतन हो गया था। वे दक्षिणा के पीछे भागने लगे थे। ब्राह्मण अपने शास्त्रविहित कर्तव्यों को भूल कर व्यभिचारी और मदिरा प्रेमी हो गए थे। उन्हें वेद और धर्मशास्त्र से कोई रूचि नहीं थी। पण्डित वर्ग समाज और देश का कर्णधार समझा जाता था, सध्दर्म की शिक्षा देना, सत्कर्म की प्रेरणा उत्पन्न करना, सत्य का उपदेश देना आदि कर्तव्यों से वह विमुख हुआ था। ब्राह्मणों के लिए अब उचित-अनुचित, धर्म-अधर्म, नैतिकता-अनैतिकता आदि का विचार नहीं रहा

---

1. शिवप्रसाद मिश्र- भारतेन्दु ग्रंथावली - पृष्ठ - 171
2. वही - पृष्ठ - 171

और वे स्वार्थपूर्ति में लगे हुए थे।

इस प्रकार भारतेन्दु ने जातवाला के माध्यम से तत्कालीन ब्राह्मण वर्ग समाज को अंधविश्वास, धर्माडम्बर, पाखण्ड, जादू टोने और, भूत-प्रेत आदि के माध्यम से किस प्रकार गुमराह कर रहा था। इसे स्पष्ट किया है। आर्थिक कठिनाइयों तथा ब्राह्मणों के पतन से मनुष्य का समाजिक एवं नैतिक स्तर भी गिर चुका था, इसे बड़े ही मार्मिक शब्दों मे इस पात्र के माध्यमसे भारतेन्दु ने दर्शाया है।

10) बनियाँ :

बनियाँ आँटा, दाल, लकड़ी, नमक, घी, चीनी चावल आदि सभी वस्तुएँ टके सेर बेचता है। क्योंकि अंधेरनगरी के बाजार में सभी वस्तुएँ इसी भाव से बिकती थी।

तात्पर्य अंधरेनगरी का 'कथ्य' सशक्त व सक्षम करने का कार्य इन सभी पात्रों ने किया है। जो तत्कालीन परिस्थितियों पर प्रकाश डालने में सक्षम सिद्ध हुए है। भारतेन्दुने ग्रामीण जनता की समझ में आनेवाली बातों के माध्यम से लोकप्रचलित कथा को आधार बनाया। इन पात्रों के चुटकिलें वाक्यप्रयोगों से अंग्रेजों के शासन में देश में अंधेरगर्दी का वातावरण निर्माण हुआ था इसे बड़े ही सूचक शब्दों में स्पष्ट किया है। देश के लोगों को अपनी प्रगति का कोई मार्ग दिखायी नहीं दे रहा था। इन परिस्थितियों में देश की जनता को अपनी प्रगति के लिए प्रेरित करने का प्रशंसनीय कार्य भारतेन्दु ने किया।

निष्कर्ष :

भारतेन्दु जी के 'भारत दुर्दशा' और 'अंधेरनगरी' इन दो नाटकों के कथ्य में देशभक्ति, अतीत का गौरवगान, वर्तमान के प्रति क्षोभ, तत्कालीन भ्रष्ट शासन प्रबंध से असंतोष की भावना, अपनी भाषा, संस्कृति और धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा, निष्ठा राष्ट्रीय चेतना की प्रेरक भावना आदि भाव प्रमुख रूप से दिखाई देते हैं तत्कालीन दुर्दिन परिस्थितियों का नाटक में प्रभावी वर्णन हुआ है।

'कथ्य' के संगठन में इसके सभी प्रमुख पात्र, प्रतीक पात्र, वर्ग पात्र और गौण पात्र सभी का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है क्योंकि, इन पात्रों के माध्यम से देश की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक स्तर पर दयनीय अवस्था होकर सांस्कृतिक मूल्यों का जो ऱ्हास हुआ था उसे स्पष्ट करने में यह पात्र सार्थक सिद्ध हुए हैं। पात्रों के संवाद, ग्रामीण जनता की बोलीभाषा का हिस्सा होने से स्वाभाविक बने हैं। सामान्य लोगों के भी समझ में आनेवाले गीत और प्रसंगों से मार्मिक बने है तथा कथा संगठन में पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ विश्लेषित करने में सक्षम सिद्ध हुए हैं।

प्रस्तुत नाटकों के निर्माण के पीछे भारतेन्दु का मूल उद्देश्य यह था कि, समाज में व्याप्त कुरीतियों, धार्मिक आडम्बरों, तत्कालीन समाज में फैली हुई गरीबी, भ्रष्ट प्रशासनजन्य असंतोष तथा जन हताशा को इनके माध्यम से अभिव्यक्ति मिलीं। उन्हें अपने पथभ्रष्ट समाज को प्रगति की सही दिशा देकर, उनमें राष्ट्रीय नवजागरण की चेतना निर्माण करने का प्रशंसनीय प्रयत्न हुआ है उन्हें सिर्फ इस बात की अभिलाषा थी कि, देश अपनी दयनीय अवस्था से उभरें और उसका अतीतकालीन गौरवशाली ऐश्वर्य फिर से लौंट आये।